— द्वितीय अध्याय —

व्यंग्य से तात्पर्य

व्यंग से तात्पर्य

जीवन के हर एक क्षेत्र में बढ़ती हुई भ्रष्ट नीति के कारण व्यंग्य आधुनिक साहित्य का प्रमुख अंग बन गया है। आधुनिक साहित्य की हर एक विधा में व्यंग्य के दर्शन देखने मिलते हैं। व्यंग्य युग के अनुकूल निर्मान होता है, उसका अपने युग के अनुकूल स्वाद भी हैं। हिन्दी साहित्य में व्यंग्य लेखन की परम्परा प्राचीन काल से चली आयी हैं लेकिन उसे एक स्वतंत्र विधा के रूप में स्वातंत्र्योत्तर काल में स्थान मिला और उसने विशेष प्रगति की, जिसमें आधुनिक निबंधों के व्यंग्य का अपना एक अलग स्थान है।

साहित्य मानव समाज का महत्वपूर्ण घटक है। साहित्य मानव के जन्म से लेकर मृत्यु तक के विकास को कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। उसमे व्यक्ति और उसके समाज की इच्छाइयाँ, बुराइयाँ, विरोध - अन्तर्विरोध, वैशिष्ट्य और समानतांए आदि का प्रतिबिंब साहित्य में दिखाई देता है। क्योंकि साहित्य समाज का दर्पन हैं। उसमें व्यक्ति और उसके समाज का चित्र अंकित होता हैं। आज साहित्य की एक विधा के रूप में व्यंग्य साहित्य को काफि प्रतिष्ठा मिली हैं।

साहित्यकार या व्यंग्यकार व्यंग्य का आइना व्यष्ठि, समाज के सामने रखता है। व्यंग्य में सोच समझ देने की क्षमता है। वह आहत तो करता हैं लेकिन मनुष्य को विचलीत नही करता। सत्य की अभिव्यक्ति करना व्यंग्य का उध्दिष्ट होता हैं और उसके लिये व्यंग्यकार को अपने समय से संबंधित रहते हुए दर्शक, भोक्ता और आलोचक बनना पड़ता है। इसके लिये व्यंग्यकार को एक साथ कितनी ही विविध परिस्थितियों तथा परिवेशगत अवस्थाओं से जुडकर यथार्थ को स्पष्ट रूप सें चित्रीत करना पडता

हैं। जनता में हलचल पैदा करने के लिये जीवन से सीधा साक्षात्कार किये बिना काम नहीं चल सकता। इसलिये व्यंग्यकार जीवन से बिकट साक्षात्कार करना पड़ता हैं।

व्यंग्य एक साहित्यिक विधा हैं। व्यंग्य वर्तमान पर प्रहार करता हैं। वह मनुष्य के भीतर के अंतस्थ को प्रभावित कर उसके चेतना में हलचल चाहता है। पाठक तथा सुज्ञ समाज सोचने के लिए मजबुर होता हैं। व्यंग्य विधा का प्रत्यक्ष संबंध मनुष्य और असके समाज से हैं, जानवरों से नही, पशु जैसा बर्ताव करनेवाले लोगों से हैं। व्यंग्य विधा विश्रृंखल सामाजिक जीवन पर सोचने के लिए हर एक व्यक्ति को मजबूर करती हैं।

डॉ• विरेन्द्र मेंहदीरत्ता ने व्यंग्य के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कहा हैं कि —

" व्यंग्य, मानव तथा जगत् की मूर्खताओं तथा अनाचारो को प्रकाश में लाकर उनके उपहास्य अथवा घृणोत्पादक रूप में आलोचनात्मक प्रहार करने में समर्थ एक साहित्यिक अभिव्यक्ति हैं।" १
व्यापक दृष्टि से देखा जाये तो सम्पूर्ण साहित्यिक आक्रोश को व्यंग्य की संज्ञा दी जा सकती हैं।" इससे यह स्पष्ट हो जाता हैं कि व्यंग्य का उद्देशय संसार भर में व्याप्त, अनाचारों, पाखण्डों एवं पापो को मूल से नष्ट करना हैं। हरिशंकर परसाई व्यंग्य साहित्य का सृजन सुधार की बजाय बदलाव के लिए कहते है।
" मैं सुधार के लिए नही बदलने के लिए लिखना चाहता हूँ। याने कोशिश करता हूँ, चेतना में हलचल हो जाय, कोई विसंगति नजर के सामने आ जाय, इतना काफि हैं। २

---

१ "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य", डॉ• बालेन्दुशेखर तिवारी - पृ•५५।
२ "सदाचार का ताबीज", हरिशंकर परसाई - पृ•११।

व्यंग्य, चेहरे पर नकाब धारन करनेवाली, रिश्वतखोरी, पक्षपाती, सिफारिशी व्यवस्था का पर्दाफाश करता है। स्वातंत्र्योत्तर काल में बढ़ती हुई भ्रष्ट प्रवृत्ति के कारण आम आदमी निराश बन गया है तो ऐसे समय व्यंग्य में ही निराश व्यक्ति को सचेत करके उसमें सामर्थ्य भर देता है। व्यंग्य साहित्य के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए डॉ॰ उमा शुक्ल ने कहा है, —

> " व्यंग्य साहित्य जीवन सड़ांध या विचारों की उग्रता को कुनैनी और तेजाबी भाषा में व्यक्त करता है। उसमे यथार्थ बोध की विषमता का क्रूर यथार्थ तर्क की वक्रता में उद्‌भासित होता है, तो जनसमाज की बुध्दि को कुरेदकर असमें तिलमिलाहट और बेचैनी पैदा करता है, जो समाज को नैसर्गिक तन्दुरूस्ती प्रदान करती है। इस युग दर्पण साहित्य को अपनी भाषा के झाड़न से झाड़ पोंचकर प्रस्तुत किया गया है।" [१]

व्यंग्य, साहित्य के माध्यम से समाज में सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् की प्रतिष्ठापना करने के लिए प्रयत्नशील रहता है और अपने लक्ष्य के मार्ग में आनेवालों की खाल उधेड़ देता है। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा व्यंग्य विधा पर समाज का गम्भीर दायित्व है। व्यंग्य में वह गम्भीरता एवं महानता है जो साहित्य की अन्य विधा में शायद ही कही मिलेगी। व्यंग्य का जन्म असंगति के धरातल पर जीवन की तीखी आलोचना करता हुआ होता है। व्यंग्य अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कभी कभी गन्दे और अश्लील शब्दों का भी प्रयोग करता है। क्योंकि अगर किसी को सरलता से समझाया जाय तो वह उन बातों को सुनता ही नही है। दुनिया में अगर इतनी

---

१ " स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", डॉ॰ बापूराव देसाई, - प्रस्तावणा मे से ।

सरलता से सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् की स्थापना हो जाती तो आज संसार के लिए "रामायण" और "महाभारत" ये दो ग्रंथ काफि हैं।

व्यंग्य साहित्य पर प्रकाश डालते हुए डॉ॰ दुर्गा दिक्षित ने कहा है —

" हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में व्यंग्य साहित्य अपेक्षाकृत आधुनिक विधा है। स्वातंत्र्योत्तर काल में उत्पन्न मोहभंग की स्थिती एवं व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में उत्पन्न व्यापक असंगति और अन्तर्विरोध ने संवेदनशील साहित्यकार को झकझोरा। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक, साहित्यिक आदि जीवन के सारे क्षेत्रों में बढ़ती हुई असंगति, अन्याय, अत्याचार, विडम्बना, छलप्रपंच, ढोंग-ढकोसले आदि को क्रोध, आक्रोश, पीड़ा, वेदना के रूप में अभिव्यक्त किया गया। पर इसमें भी साहित्यकारों की संतुष्टि नही हो पाई। इन विविध अनुभूतियों को कटु एवं तिक्त व्यंग्यों के रूप में व्यंग्य कविताओं, व्यंग्य कहानियों तथा व्यंग्य निबंधों में अभिव्यक्ति मिली। परिणामत: विविध पत्र-पत्रिकाओं में तथा स्वतंत्र रचनाओं के रूप में व्यंग्य साहित्य की विपुल सर्जना हुई।" २

व्यंग्य में एक बलवती प्रेरणा तथा पूर्वयोजना होती हैं। जिसके आधार पर एक विशेष उद्देश्य को स्पष्ट करने में सफलता पायी जा सकती है। व्यंग्य की यही उद्देश्यपूर्णता उसे ईमानदार, सच्चा और संवेदनशील सिध्द करती हैं। व्यंग्य निराशा तथा निरुत्साही समाज जीवन में आशा का संदेश लाता हैं, उसमें स्फूर्ति जगाता है और उसे संघर्ष के लिए तैयार करता हैं। व्यंग्यकार अपने व्यंग्य द्वारा जीवन के सीलन भरे बदबूदार कमरे में खुली हवा

---

२ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", डॉ॰ बापूराव देसाई, - प्रस्तावणा मे से ।

का एक झोका भरने का उद्देश्य लेकर चलता है। व्यंग्यकार जब व्यंग्य का प्रयोग करता है तब उसका हृदय बाह्य और आन्तरिक विसंगतियों से डावाडोल हो उठता है। व्यंग्य करते हुए व्यंग्यकार के चेहरे पर जो मुस्कराहट होती है वह आलम्बन की सच्चाई उघड़ने में समर्थ होती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद व्यंग्य साहित्य अधिक मात्रा में लिखा गया, क्योंकि नयी पीढ़ी में आक्रोश है, घुटन है, कुंठा है तथा वह समाज में फैली हुई विषमताओं के प्रति सशक्त प्रतिक्रिया व्यक्त करती है। वैसे देखा जाय तो वर्तमान काल में राजनैतिक व्यंग्य अधिक मात्रा में लिखा जा रहा है क्योंकि आजकल देखा जाता है कि राजनीति अधिक मात्रा में विकृत हो गयी है। दल-बदल की बढ़ती हुई प्रवृत्ति, राजनैतिक नेताओं की धनलिप्सा, कथनी और करनी में अन्तर, सरकारी धन का अपव्यय, बेरोजगारी, महँगाई, छात्र असंतोष, विश्वविद्यालयों/गुटबंदी, व्यापारियों के अनैतिक कार्य, मूर्ति चोरी, तस्कर-व्यापार, अंग्रेजी प्रेम आदि बीमारियों को दूर करने के लिए व्यंग्यरूपी सस्ती दवा ही बहुत आवश्यक है। वर्तमान जीवन में संसद से लेकर सड़क तक, घर से लेकर बाहर तक हर क्षेत्र में सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक आदि में अन्याय, अत्याचार, बलात्कार, विसंगति, असामंजस्य, अवसरवाद, दूमूँहापन, बेशर्मी, पाखण्ड और झूठ का अनुभव किया जाता है। व्यंग्य इन विसंगतियों को नग्न यथार्थ के साथ अभिव्यक्ति देने में समर्थ है।

व्यंग्य का प्रयोजन और महत्व —

प्रत्येक वस्तु का अपना निजि प्रयोजन होता है। अतः साहित्य का भी अपना प्रयोजन होता है। मानव जाति के विकास के लिए साहित्य बहुत आवश्यक है। साहित्य संसार में मंगल की कामना करता है और अमंगल

का नाश करता है अर्थात् सत् प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करता हैं और असत् प्रवृत्ति को तिरस्कृत करता है। व्यंग्य साहित्य की ही एक विधा, अंग है। अत: साहित्य से जिन मंगल तत्वों की प्राप्ति होती है वही मंगल तत्वों की प्रतिष्ठापना व्यंग्य विधा से होती हैं।

"इंग्लीश सटायर" इस ग्रंथ में जेम्स सदरलैंड ने व्यंग्य के प्रयोजन पर प्रकाश डाला हैं।

"Satire is wholly Occupied in mannerly and Covertly reproving of all vices." [1]

अर्थात सभी प्रकार के दोषों को मिटाने का माध्यम व्यंग्य ही है। ऐसा जेम्स सदरलैंड ने स्विकार किया है। हिन्दी के प्रख्यात व्यंग्यकार केशवचन्द्र वर्मा ने व्यंग्य के संदर्भ में कहा है कि —

" अगर व्यंग्य का निर्मान न होता तो आदमी सारी जीन्दगी एंग्री मेन बनकर घूमता रह जाएंगा। व्यंग्य साहित्य विकृतियों का सजक अभिव्यंजक है, कालकूट से बोझिल परिवेश का दर्पण है।"

हिन्दी साहित्य के इतिहास में हर एक युग में व्यंग्य का उपयोग किया गया है। कबीर ने नैतिक मुल्यों की प्रतिष्ठापना के लिए हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष, जात-पाँत, धर्म के आडम्बर, व्यर्थ के पूजा-पाठ आदि पर प्रहार करते हुए समाज सुधार का नारा लगाया। रीतिकाल के कवि बिहारी ने जनता की सेवा छोडकर अपनी नई नवेली पत्नी के साथ रति-क्रिडा रत होनेवाले राजा जयसिंह को व्यंग्य का लक्ष्य बनाया। जिसके संबंध में यह दोहा उल्लेखनीय हैं —

---

१ "हिन्दी व्यंग्य विधा:शास्त्र और इतिहास", डॉ॰ बापुराव देसाई - पृ॰७३ ।

" नहि पराग नहि मधुर मधु, नहि विकासु इहि काल ।
अली, कली ही सौं बिंध्यौं, आगे कौन हवाल ।।"

स्वातंत्र्यपूर्व आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके समकालिन साहित्यकारों ने व्यंग्य का प्रयोग अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति और प्रशासन व्यवस्था पर किया। भारतीय जनता के शोषण पर आक्रोश प्रकट किया। तत्कालीन समाज में व्याप्त कर्मकाण्ड, वर्ण-व्यवस्था, ब्रम्ह तथा आर्य समाज, ईसाई धर्म, मुर्ति पूजा, समुद्र यात्रा आदि को व्यंग्य का लक्ष्य बनाया। अंग्रेजी प्रभाव के कारण पश्चिमी सभ्यता, आचार - विचार का अन्धानुकरण करनेवालों की पोल खोली। तत्कालीन समाज में व्याप्त बाल विवाह, विधवा विवाह, अनमेल विवाह, सतिप्रथा, दुश्चरित्र नारी, अंध विश्वास जैसे दोषों को व्यंग्य के माध्यम से दूर करने का प्रयास किया। संक्षेम में उस काल में राजनीतिक एवं प्रशासनिक असंतोष, सामाजिक रीति-परम्परा, धार्मिक आडम्बर और संस्कृति में होनेवाला परिवर्तन आदि को साहित्यकारोंने आपने रचना का विषय बनाया।

स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद देश में हर एक क्षेत्र में कुप्रवृत्तियों ने जन्म लिया, जिसका सिधा संबंध मनुष्य की विकृत प्रवृत्ति से है। देश के सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यिक, शैक्षणिक आदि क्षेत्र में भ्रष्ट प्रवृत्तियों ने अपना जाल फैलाया है। आज व्यंग्य का प्रयोग मनुष्य की विकृत प्रवृत्ति को बदलने के लिए किया जा रहा है।

आज देश में नेतृत्व भ्रष्ट है, नेताओं की स्वार्थप्रियता और राजनीति पर घरानेशाही का अधिकार, नेताओं की करनी और कथनी में अन्तर है। प्रशासन में सरकारी अफसर रिश्वत लिये बिना कोई काम नही कर रहे है। व्यापारियों की मुनाफाखोरी और कालाबाजारी चल रही है, जिसके कारण मँहगाई बढ़ रही हैं। शिक्षा के क्षेत्र में भ्रष्टाचार बढ़ रहा

है, छात्र असंतोष और दिशा-हीन बनते जा रहे है, दिन-ब-दिन बेरोजगारी बढ़ रही है। सरकारी योजनाओं का ठीक तरह से अमल नही हो रहा है, जिससे सरकारी धन का अपव्यय हो रहा है, लोगों में कमिशन लेने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। जाली नोटों का छपखाना, चोरी, और तस्करी बढ़ रही है। भारतीय समाज में हरिजनों और आम आदमी पर अत्याचार हो रहे हैं। महिलाओं पर बलात्कार हो रहे है, दहेज - प्रथा अब भी रूढ़ हैं। पाश्चात्य संस्कृति और सभ्यता का प्रभाव बढ़ रहा हैं। आज देश में धर्म के नाम पर राम और रहिम को लेकर मंदिर-मसजीद की समस्या बन खड़ी हैं। समाज में उँच-नीच के भेद-भाव और अमिरी-गरीबी बढ़ रही हैं। अंधश्रद्धा और भ्रष्ट रूढ़ी परम्पराएं विद्यमान हैं। आज हर एक क्षेत्र में आदर्श जीवन-मूल्यों का पतन हो रहा हैं, जिसे देखकर "दिनकर सोनवलकर" ने "व्यंग्य की भूमिका" में लिखा हैं --

" नेतृत्व भ्रष्ट है, न्याय अन्धा हैं, छात्र दिशाहीन है, शिक्षा खोखली है, अफसर रिश्वतखोर है, समाज दकियानूस है, बुध्दिजीवी कमरों में बन्द है, साहित्य जन-जीवन से कटा हुआ है, ऐसे में व्यंग्य ही एकमात्र विकल्प है। व्यंग्यकार ही राम-झरोखे में बैठकर सबका ठीक हिसाब-किताब रख सकता है। [१]

भगवान श्री शंकर के जटाओं में से गंगा ने जनम लिया, जिससे गंदगी फैली हुई हैं और हम सब गंगा साफ करने की बोली बोल रहे हैं ऐसे समय हमें उन जटाओं का ही मुंडन करना चाहिए, जिससे पूरी गंदगी साफ हो जाय। यही काम आज व्यंग्य विधा के माध्यम से किया जा रहा हैं।

---

१ " हिन्दी व्यंग्य विधा : शास्त्र और इतिहास",
डॉ॰ बापूराव देसाई - पृ॰८१ ।

व्यंग्य एक भावना है, जो त्वरित होकर समय और कर्तव्य कर्म से प्रेरित रहती है। इसलिये वह समाज के सड़ी-गली व्यवस्था पर प्रहार और सृजन के रास्ते निश्चित करती है। व्यंग्यकार प्रहार विशेष हेतु से प्रेरित होने के कारण केवल विदूषकत्व और हँसाने तक सीमित नही है, बल्कि समाज के क्रांतिकारी विचार, संहार और सृजन की द्वंद्वात्मकता के और आगे आते है। आर्थिक सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक पूरी व्यवस्थागत हास्यास्पदताओं, विसंगतियों और छद्मों को खोलने - उघाड़ने और उनपर भरपूर प्रहार करने के लिहाज से व्यंग्य की विधा काफी कारगर साबित हो सकती है। ग्रीक, लैटीन, फ्रेंच, अंग्रेजी, रूसी साहित्य में व्यंग्य की समृध्द परंपरा है। व्यंग्य काव्य, व्यंग्य उपन्यासो, के साथ एब्सर्ड नाटक भी व्यंग्य के ही एक रूप है। हिन्दी में भी व्यंग्य कविताओं, उपन्यासो, निबंधो की अपनी समृध्द परम्परा है।

स्वतंत्रता के बाद के हमारे जीवन मूल्यों के विघटन का इतिहास जब भी लिखा जायेगा तो परसाई का साहित्य संदर्भ का काम करेगा। सामाजिक जीवन की व्याख्या, उसका विश्लेषण और उसकी भर्त्सना तथा विडम्बना के लिये व्यंग्य से बढ़कर दूसरा हाथियार नही हो सकता यह बात परसाईजीने अच्छी तरह से जान ली थी, इसीलिये उन्होंने अपनी अभिव्यक्ति के लिए व्यंग्य विधा का निर्णय किया और उसी का विकास करते रहे।

व्यंग्य, किसी भी समाज का काला इतिहास तथा किसी भी समाज में घटित होनेवाली असंगति, बुराईयाँ, विद्रूपताएँ, अन्तर्विरोध आदि को प्रस्तुत करता है। वह किसी समाज, राष्ट्र या व्यक्ति अधिक से अधिक उन्नति कर रहा है इसीलिए उसमें जो असंगति, बुराईयाँ व्याप्त है उनको प्रकाश में नही लाता ऐसा नही है। व्यंग्य लेखक चाहे वह राष्ट्र या समाज या व्यक्ति कितना भी प्रगत या विकसित क्यों न हो, उसमें

पलनेवाली हर एक विसंगति, अन्तर्विरोध, बुराईयों को अपने व्यंग्य लेखन के माध्यम से उजागर कर लोगों के सामने पेश करता हैं। स्वातंत्र्योत्तर काल में जिन व्यंग्य लेखकों ने अपने साहित्य के माध्यम से जिन व्यंग्य विधाओं का सृजन किया है, वह वर्तमान युग के काले पन्नों का संदर्भ हैं।

व्यंग्य लेखन की उपयोगिता और महत्व पर प्रकाश डालते हुए डॉ. बालेन्दु शेखर तीवारी जी ने कहा हैं, —

" निराश और हतोत्साहित समाज के लिए व्यंग्य ही आशा का संदेश लाता हैं, असमें स्फूर्ति जगाता हैं और संघर्ष के लिए प्रतिबध्द करता हैं। इतना निःसंदिग्ध हैं कि समसामयिक जटिक और भ्रष्ट स्थितियों में व्यंग्य ही वास्तविकता, नव-निर्माण और संभावनाओं का प्रदाता हैं। [१]

प्रगतिशील आंदोलन के समय में उपजे इस माध्यम से सामाजिक यथार्थ को पहचानने, पकड़ने और पूरी धारा के साथ अभिव्यक्ति देने की इतनी क्षमता हैं कि, उसे स्वतंत्र रूप में सामने लाने की जरूरत महसूस हुआी और शायद इसीलिए आज व्यंग्य को स्वतंत्र विधा का दर्जा मिल रहा हैं।

प्राचिन काल से व्यंग्य लेखन को एक शैली, व्यंग्य एक अभिव्यक्ति प्रणाली तथा असे व्यंग्यात्मक शैली से भी संम्बोधित किया जाता था लेकिन वर्तमान युग में व्यंग्य का एक आधुनिक विधा के रूप में जन्म हुआ। स्वतंत्र्य प्राप्ति के बाद देश में अनेक विसंगतियाँ हर एक क्षेत्र में दिखाई देती हैं और व्यंग्य समाज की इन विकृत स्थिति या परिस्थिति को स्पष्टता के साथ

---

१ "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य", डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, १९७८ - पृ.६५ ।

प्रकट करता है। उतनी स्पष्टता साहित्य की अन्य विधाएं नहीं कर पाती। इसीकारण व्यंग्य आधुनिक जीवन की लोकप्रिय विधा बन गयी।

व्यंग्य के बारे में यह कहा जा सकता है कि जिस तरह अरस्तु के विरेचन सिद्धान्त से उत्तेजीत भावों का शमन किया जाता है उसी तरह व्यंग्य के माध्यम से व्यक्ति, समाज के सभी दूषणों का परिहार किया जा सकता है।

तत्कालीन संदर्भों से लगाव व्यंग्य के सबसे महत्वपूर्ण गुण है। शाश्वत साहित्य के बारे में लंबी-चौडी चर्चाएं करनेवाले आलोचक व्यंग्य को पत्रकारिता के दर्जे की वस्तु मानते है और केवल चटखारेबाजी उसका उद्देश्य समझते हैं। व्यंग्य का प्रयोग किसी गंभीर उद्देश्यपूर्ति के लिये किया जाता है। इस बात को वे मानते ही नहीं। ऐसे आलोचकों और विचारकों ने आदर्श साहित्य के जो मानदण्ड स्वीकृत किये है, उनकी धज्जियाँ उड़ाने का काम व्यंग्य करता हैं। परिणाम यह होता है कि ऐसे लोगों की नजर में व्यंग्य केवल हल्का, सड़कछाप, फनी होता हैं। ये लोग व्यंग्य को साहित्य की "शेड्युल्ड कास्ट" विधा मानते हैं और इन्ही मर्यादावादी लोगों ने कबीर को भी कवि मानने से इन्कार किया था। पर ये लोग निश्चित रूप से गलत धारणाओं के शिकार बन गये हैं। यह बात असलियत का पत्ता चलने पर सिध्द होती है। वास्तविकता को देखते हुए व्यंग्य का महत्व मानना ही पड़ता हैं। विशेषतः आज के जमाने की तेज रफ्तार के साथ दौडने का काम केवल व्यंग्य ही कर सकता हैं। समाज की जटिलता, संकीर्णता का अहसास केवल व्यंग्य को ही होता है। इस दृष्टि से व्यंग्य का महत्व अनन्य साधारण हैं।

व्यंग्य हास्य और कटु आलोचना के समन्वय से अुत्पन्न होता हैं। व्यंग्य केवल हँसाता नहीं, हँसते हँसते विसंगतियो की ओर संकेत करता

हैं। विसंगतियों को स्पष्टता से व्यक्त करता है। इस प्रकार के व्यंग्य को केवल व्यंग्य कहने की अपेक्षा हास्य-व्यंग्य कहना अधिक उचित होगा। हास्य व्यंग्य की श्रेष्ठ रचनाओं मे गुदगुदाते हुये भी सून्न करने की पूर्ण क्षमता होती हैं। ध्यान इस बात का रखना पड़ता है कि इन बातों को सत्य के साथ अभिव्यक्ति हो।

व्यंग्य का मानव जीवन में जो स्थान हैं वह बहुविध हैं, कहि वह चुटकी चुटकी काटना हैं, तो कही हास्य के साथ मिलकर जीवन के तनाव पूर्ण वातावरण को दूर करता हैं, तो कही वह मानव की कुप्रवृत्ति पर प्रहार करता हैं। व्यंग्य लेखन के लिए एक पैनी दृष्टि आवश्यक होती हैं, जिससे व्यक्ति और समाज की अमानवीय मनोवृत्ति के कारण समाज जीवन में जो विकृतियाँ उभरती हैं, उसे वह व्यक्त कर सके। साहित्यकार या व्यंग्यकार व्यंग्य का का आइना व्यक्ति, समाज आदि के सामने रखता है, जिसमें अपना रूप देखकर समाज के सभ्य, प्रतिष्ठित माने-जानेवाले व्यक्ति भी एकान्त मे अपना मुँह छिपा लेना चाहते हैं।

स्वातंत्र्य प्राप्ति के बादके व्यंग्य लेखन का बड़ा महत्व रहा है। इससे न केवल लोकजीवन के दाँव-पेच परखने की नई नजर दी वरन् वस्तुस्थिति की प्रखर अनुभूति के दूबारा जिन्दगी को एक नयी राह भी दिखायी हैं। आजकल व्यंग्य साहित्य रुचिकर एवं मानव-मनोविज्ञान के अनुकूल लग रहा है, इससे यह सिध्द होता है कि इस विधा का महत्व दिन - ब - दिन बढ़ रहा हैं। यह कहना उचित होगा कि आधुनिक गद्य, पद्य जो कुछ लिखा जा रहा हैं, उसमें आधेसे ज्यादा व्यंग्य प्रधान साहित्य हैं।

व्यंग्य का जन्म या उद्‌भाव —

आगे हम व्यंग्य की चर्चा करने जा रहे हैं, तो पहले यह मालुम करना चाहिए कि इस व्यंग्य का प्रारम्भ या जन्म कैसा हुआ ? इसका निर्माण किस लिए हुआ ? और कब हुआ ? आदि प्रश्नों की जानकारी लेना आवश्यक हैं।

हम प्राय: यह अनुभव करते रहते हैं कि दुनिया में अच्छे बुरे इन्सान तो रहते हैं इनमें एक की प्रवृत्ति असत् होती हैं, तो दूसरे की सत्। सत् प्रवृत्ति के कारण जीवन में मंगल कार्यों की कामना कर सकते हैं लेकिन असत् प्रवृत्ति सदैव बुराई, अन्याय, अत्याचार, के मार्ग पर चलती हैं तो इस अन्याय, अत्याचार बुराई के मार्ग पर चलनेवाली प्रवृत्ति को रोकने के लिए, सत्य और न्याय की प्रतिष्ठा करने के लिए शायद व्यंग्य का निर्माण हुआ होगा।

अपनी कानून व्यवस्था में बहुत-सी बातो की कमियाँ हैं, जिसके कारण चालाकी और होशियार अपराधियों को दण्ड नही मिलता ऐसे लोगों को समाज की नजरों गिराने और सत्य के मार्ग पर आरूढ होने के लिए व्यंग्य का जन्म हुआ होगा। डॉ॰ बरसानेलाल चतुर्वेदी जी ने व्यंग्य का उद्‌गम कैसा हुआ ? इसके बारे में लिखा हैं कि —

> " कानूनों की कमियों एवं अपराधियों की होशियारी के कारण सभी अपराधियों को दण्डित नही किया जाता। यही कारण हैं कि व्यंग्य का प्रयोग, प्रारम्भ हुआ ताकि उन अपराधियों को समाज की नजरों में गिराया जाये, जिन्हे धर्म तथा दण्ड का भय अपराध करने से नही रोक पाता। " [१]

---

१ " स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार",
डॉ॰ बापूराव देसाई - पृ॰१८।

व्यंग्य के बारे में यह भी अवधारणा है कि इसका प्रारम्भ गाली-गलौज से हुआ होगा। पहले व्यक्तिगत स्तर पर और बाद में सामाजिक स्तर पर व्यंग्य का प्रयोग होता रहा होगा। आज व्यंग्य एक शस्त्र के रूप में काम करता है, जिसके सहारे व्यक्ति, परिवार, समाज, देश, राष्ट्र, राज्य और विश्व सुधार का काम किया जाता है।

व्यंग्य शब्द का अर्थ —

रोम में सन् ६५ ई॰पूर्व अमर्यादित नाटकों के लिए 'Saturge' शब्द का प्रयोग होता था, आगे चलकर लातिन (लैटिन) में Satura बन गया और बाद में अंग्रेजी में Satire हुआ। अंग्रेजी "सटायर" के लिए हिन्दी में "व्यंग्य" शब्द प्रचलित है।

आचार्य मम्मट ने काव्य के तीन भेद किये हैं — १) उत्तम काव्य २) मध्यम काव्य, ३) अधम काव्य। उत्तम काव्य को ध्वनि काव्य भी कहते हैं, इसमें व्यंग्यार्थ वाच्यार्थ से अधिक उत्कृष्ट होता है। उत्तम काव्य ही तत्काल में व्यंग्य रहा है। उसी प्रकार काव्य में तीन शब्द शक्तियाँ होती हैं — १) अभिधा, २) लक्षणा, ३) व्यंजना। व्यंग्य से अभिधा और लक्षणा का विशेष सम्बन्ध नहीं आता लेकिन व्यंजना शब्द-शक्ति का व्यंग्य में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है।

"अंजन" धातु में "वि" उपसर्ग लगाने से "व्यंजन" शब्द बन गया। व्यंजना का अर्थ-विशेष प्रकार का अंजन। जिस प्रकार आँखों में अंजन लगाने से दृष्टि-दोष दूर होता है उसी प्रकार शब्द की व्यंजना शक्ति अभिधा तथा लक्षणा को पीछे छोडकर उसके मूल में छिपे हुए अकथित अर्थ को घोषित कराती है।

"व्यंग्य" शब्द संस्कृत भाषा का है जो "व्यंजना" शब्द-शक्ति द्बारा निर्मित है। "व्यंग्य" शब्द "वि" उपसर्ग पूर्वक "अञ्ज" धातु में "ण्यत्" प्रत्यय लगाकर बन गया है। इस व्यंग्य के कई अर्थ हैं — १) विविक्षा के द्वारा निर्देश, २) अप्रत्यक्ष इंगित के द्वारा निर्देश, ३) सांकेतिक अर्थ।

"नालन्दा विशाल शब्द सागर" पृ•१३०८ में व्यंग्य शब्द का अर्थ — १) शब्द का व्यंजना वृत्ति के द्वारा प्रकट होनेवाला अर्थ। २) गूढ़ अर्थ। ३) ताना, बोली या चुटकी। ४) मेंढक आदि। तो "संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ", चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा एवं तारणीश झा व्याकरण वेदान्ताचार्य" इसमें व्यंग्य का अर्थ — वह लगती हुई बात जिसका कुछ गूढ़ अर्थ हो।

व्यंग्य के लिए "व्यंग" का प्रयोग कुछ विद्वान करते हैं। तो कुछ "व्यंग्य" शब्द का प्रयोग मानते हैं। इनमें व्यंग्य शब्द ही अधिक समिचीन लगता है। "डॉ• वीरेन्द्र मेंहदीरत्ता" ने व्यंग के स्थान पर "व्यंग्य" के प्रयोग का आग्रह किया हैं। डॉ• बालेन्दु शेखर तिवारी जी ने " व्यंग की अपेक्षा "व्यंग्य" के प्रयोग को अधिक उचित माना हैं।

डॉ• बापूराव धोंडु देसाई जी ने व्यंग्य शब्द पर बल देकर कहते हैं कि — "व्यंग्य" शब्द वि + अंग = व्यंग का अर्थ हैं - "शरीर के किसी एक अवयव का न होना" याने "कार्य शक्ति कमी होना, किन्तु व्यंग्य की "कार्यशक्ति अधिक हैं वह अधिकतर भाव प्रकट करने में सक्षम हैं। इसकारण व्यंग्य शब्द का ही प्रयोग उचित लगता हैं। "व्यंग्य" शब्द व्यंजना शब्द-शक्ति द्वारा निर्मित हैं, जिसका अर्थ — वह लगती हुई बात याने व्यंजना-शक्ति अभिधा और लक्षणा को पिछे छोडकर उसके मूल में छिपे हुए अकथित अर्थ को घोषित करती हैं, जिसे सूनने से आलम्बन को अपने दोषों

का पत्ता चलकर वह उन्हे दूर करने का प्रयास करता हैं।

व्यंग्य की परिभाषा —

साहित्य में हर एक विधा की परिभाषा या व्याख्या की जाती है अत: व्यंग्य की परिभाषा करने का प्रयास अनेक विद्वानों ने किया हैं। उदाहरण के तौरपर कुछ विद्वानों की परिभाषाएँ देखी जा सकती है —

डॉ॰ प्रेमनारायण दीक्षित ने "व्यंग्य" को उपहास की संज्ञा दी हैं और उसे सहानुभूति-विरोध भाव के रूप में परिभाषित किया है —

" जिस हास्य में सहानुभूति की मात्रा नही होती, वरण उस हँसी में घृणा आदि सहानुभूति विरोधी भावों की छाया पड़े, उसे उपहास कहते हैं।" [१]

डॉ॰ बरसानेलाल चतुर्वेदी व्यंग्य की परिभाषा देते हुए लिखते हैं —

" आलम्बन के प्रति तिरस्कार, उपेक्षा या भर्त्सना की भावना लेकर बढ़नेवाला हास्य व्यंग्य कहलाता हैं।" [२]

डॉ॰ भानुदेव शुक्ल व्यंग्य की विवेचना करते हुए व्यंग्य को उपहास कहते हैं। अत: उन्होने व्यंग्य की परिभाषा दी हैं —

" व्यंग्य अथवा उपहास साहित्यकार के हाथ का वह चाबुक हैं, जिसकी मार से व्याकुल होकर व्यक्ति, संस्था अथवा समाज सही मार्ग पर चलने को बाध्य किया जाता हैं।" [३]

---

१ "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य", - डॉ॰बालेन्दुशेखर तिवारी पृ॰५१।

२ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य एवं निबंधकार", - बापूराव देसाई, पृ॰२२।

३ "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य", - डॉ॰बालेन्दुशेखर तिवारी पृ॰५२।

हिन्दी के प्रसिध्द व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई जी ने व्यंग्य का सही कार्य निर्देश करते हुए, व्यंग्य की परिभाषा दी है —

" व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता हैं, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखण्डों का पर्दाफाश करता हैं।" [१]

डॉ॰ प्रभाकर माचवेजी ने व्यंग्य की व्याख्या करते हुए लिखा हैं —

" मेरे लिए व्यंग्य कोई पोज या अन्दाज या लटका या बौध्दिक व्यायाम नही, पर आवश्यक अस्त्र है। सफाई करने के लिए किसी को तो हाथ गन्दे करने ही होंगे, किसी न किसी को तो बुराई अपने सर लेनी ही होंगी। " [२]

डॉ॰ आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी —

" व्यंग्य वह हैं, जहाँ कहनेवाला अधरोष्ठ में हँस रहा हो और सुननेवाला तिलमिला उठा हो और फिर भी कहने वाले को जबाब देना अपने को और भी उपहास्पद बना लेना हो जाता हो। " [३]

अमृतराय जी ने व्यंग्य को परिभाषा इस प्रकार की है —

"व्यंग्य पाठक को क्षोभ या क्रोध को जगाकर प्रकारान्तर से उसे अन्याय के विरूध्द संघर्ष करने के लिए सन्नध्द करता हैं। " [४]

केशवचन्द वर्मा जी के अनुसार —

"मानव व्यापार के व्यापक सन्दर्भ में जहाँ, "कथनी और करनी" का भेद सहज ही व्यंग्य को जन्म देता रहता हैं। " [५]

---

१ "सदाचार का ताबीज", - हरिशंकर परसाई, दिल्ली, १९६७ - पृ॰१०।

२ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", डॉ॰बापूराव देसाई पृ॰२२।

३ — वही —

४ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", - डॉ॰बापूराव देसाई पृ॰२३।

५ — वही —

डॉ॰ एस॰पी॰ खत्री ने व्यंग्य को उपहास की संज्ञा दी है और उसमें आलम्बन को घृणास्पद सिध्द करने की शक्ति पर बल दिया है —

" जिस प्रकार समाज सुधारक समाज के दोषों पर अपनी दृष्टि एकाग्र कर उनकी अनैतिकता तथा उनकी अमानुषिकता पर आक्षेप कर उन्हे उच्च स्वर से घृणित प्रमाणित करने लगते है, उसी प्रकार उपहास की अपरिमार्जित दृष्टि अवगुणों और दोषों पर गड़ जाती हैं और जब तक वह उन्हे घृणास्पद नही सिध्द कर लेती, उसे संतोष नही होता। " [1]

डॉ॰ विरेंद्र मेंहदीरत्ता —

" शास्त्रीय दृष्टि से व्यंग्य मानव तथा जगत की मूर्खताओं तथा अनाचारों को प्रकाश में लाकर उनके उपहास्य अथवा घृणोत्पादक रूप पर आलोचनात्मक प्रहार करने में समर्थ एक साहित्यिक अभिव्यक्ति हैं। " [2]

डॉ॰ शेरजंग गर्ग —

"व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक अभिव्यक्ति या रचना हैं, जिसमें व्यक्ति, तथा समाज की कमजोरियों, दुर्बलताओं, कथनी और करनी के अन्तरों की समीक्षा अथवा निन्दा भाषा को टेढ़ी भंगिमा देकर अथवा कभी-कभी पूर्णत: सपाट शब्दों में प्रहार करते हुए की जाती हैं। वह पूर्णत: अगम्भीर हो सकती हैं, निर्दय लगते हुए दयालु हो सकती हैं, प्रहारात्मक होते हुए तटस्थ लग सकती हैं, भरपेल लगती हुई बौध्दिक हो सकती हैं, अतिशयोक्ति एवं अतिरंजता का आभास देने के बावजूद पूर्णत: सत्य हो सकती हैं। " [3]

---

१ "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य", डॉ॰बालेन्दुशेखर तिवारी, पृ॰५२।

२ "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य", डॉ॰बालेन्दुशेखर तिवारी, पृ॰५५।

३ — वही —

व्यंग्य को लेकर पाश्चात्य विद्वानों ने भी अपनी अपनी मान्यताओं के आधार पर अनेक विद्वानों ने उसे परिभाषीत किया है, जो निम्नलिखीत है —

"आक्सफर्ड कंपनियन टू इंग्लिश लिट्रेचर", में व्यंग्य की परिभाषा —

"व्यंग्य वह पद्य अथवा गद्यात्मक रचना है जिसके द्वारा विद्यमान, दुर्गुण अथवा मूर्खताओं को निन्दित किया जाता है।" [१]

डॉ॰ जार्ज मेरेडिथ —

"यदि उपहास्य स्पष्टता हमारे सम्मुख हो और उसके विषय में हमारी अनुकंपा, सहानुभूति शेष न रहे तो समझ लेना चाहिए की अभिव्यक्ति में हम व्यंग्य की पकड़ में आ रहे हैं।" [२]

डॉ॰ जॉन एम॰ बुलिट —

"पवित्र व्यक्तियों के चरित्र एवं चारित्र्य के दोषों पर साहित्यिक आघात व्यंग्य की सीमा में परिगणित किया जा सकता है। फिर वह नगण्य है कि वह अच्छा है कि बुरा है, सामान्य है कि विशेष है, सही है कि गलत है, कड़ा है कि विनोदपूर्ण, गद्य है कि पद्य है।" [३]

डॉ॰ जेम्स सदरलैंड ने अपने ग्रंथ "इंग्लीश सटायर" में व्यंग्यकार के उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए लिखा है —

"व्यंग्यकार का कार्य न्यायाधीश की भाँति न्यायपालन कराने का है, शिष्ट समाज की मर्यादाओं की रक्षा करना है। नर-नारियों को नैतिक, बौध्दिक, सामाजिक या अन्य कसौटियों पर खरे उतरने के लिए सचेत करने का है।" [४]

---

१ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", डॉ॰बापूराव देसाई पृ॰२०

२ — वही —

३ " — वही —

४ — वही —

डॉ॰ बरसानेलाल चतुर्वेदीजी ने "मैथ्यू हागर्थ" की व्यंग्य की व्याख्या करते हुए लिखा है —

"व्यंग्य चेतावनी देता है कि मनुष्य वह खतरनाक जानवर है, जिसमें मूर्खतापूर्ण कार्य करने की अमर्यादित क्षमता है और यदि व्यंग्य द्वारा इस सत्य की स्पष्ट अभिव्यक्ति कर दी जाती है तो पर्याप्त है।"[१]

डॉ॰ आर्थर पोलार्ड —

"उसका उद्देश्य अपने पाठकों को निन्दा और आलोचना में प्रवृत्त होने के लिए जगाना है और यह काम वह उन्हें परिहास, अभिहस्य, अपमान, क्रोध और घृणा की विविध भाषात्मक अवस्थाओं में भटका कर पूरा करता है।"[२]

व्यंग्य की विशेषताएं —

हिन्दी विद्वान और पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाओं पर हम अगर विचार करे तो निम्नांकित बाते क्रम से हमारे ध्यान में आ जायेंगी।

१. विद्वानों का एक वर्ग उसे हास्य का सहकारी मानकर चलता है, तो विद्वानों का दूसरा वर्ग उसे बिलकुल स्वतंत्र मानता है।

२. व्यंग्य हास्य और कटु आलोचना के समन्वय से निर्माण होता है।

३. व्यंग्य एक अस्त्र है, जिसके सहायता से व्यक्ति और समाज के अवगुणों को धमकाया जाता है अगर वह नही मानता तो उस अस्त्र से अवगुणों पर प्रहार करके उनका खण्डन करने का प्रयास किया जाता है।

---

१ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", डॉ॰बापूराव देसाई, पृ॰२०।

२ "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य", डॉ॰तिवारी, पृ॰६४।

४. व्यंग्य के कारण आलम्बन के प्रति सहानुभूति नही रहती बल्कि तिरस्कार, उपेक्षा, भर्त्सना, घृणा जैसे भाव बढ़ जाते है।

५. व्यंग्य एक चाबुक है, जिसकी मार से व्यक्ति, संस्था, और समाज सत् के मार्ग पर चलते हैं।

६. व्यंग्य जीवन की वस्तुस्थिति, यथार्थ, स्थिति से साक्षात्कार करता हैं।

७. व्यंग्य एक जमादार का काम करता हैं, जिससे समाज की गंदगी साफ होती हैं।

८. व्यंग्य की मार जिसे पडती हैं वह तिलमिला उठता हैं, फिर अपने आप पर सोचने को मजबूर होता हैं।

९. व्यंग्य अन्याय के खिलाफ आवाज उठाकर उन कुसमताओं का विनाश करता हैं। व्यंग्य चमकते हुए तलवार के समाज होता हैं, जिसकी चमक, तेज, या शक्ति देखकर सामाजिक जीवन में व्याप्त विद्रूप परम्पराएँ अपना विद्रूप रूप छोड देने लगती है।

१०. आज लोगों की करनी और कथनी में जो अन्तर आया हैं उस पर व्यंग्य प्रकाश डालता हैं। आज अपने देश के नेता लोग जनता के सामने गीता तथा गांधीजी के विचारों को रखते हैं पर कार्य हमेशा अपने स्वार्थ का करते हैं, ऐसे लोगों पर व्यंग्य ही काबू पा सकता हैं।

११. व्यंग्य रचना मानव समाज के सुधार के लिए लिखी हुई वाक्पटुत्वपूर्ण साहित्यिक रचना हैं।

१२. व्यंग्य व्यक्ति और उसके समाज के दोषों को उच्चस्वर में घोषित कर सिध्द करता हैं।

१३. व्यंग्य एक उपयोगी सामाजिक विधा हैं।

१४. व्यंग्य का उद्देश केवल हँसाना नही हैं।

१५. व्यंग्यकार सत्य बातों को ही साहित्येक अभिव्यक्ति देता हैं।

१६. व्यंग्य के द्वारा सामाजिक जीवन में व्याप्त दुर्गुणों एवं मुर्खतापूर्ण कार्यों की निंदा की जाती हैं।

१७. व्यंग्य सामाजिक जीवन में व्याप्त अंतर्विरोध, पाखण्ड, मिथ्याचारों के बीच आक्रोशवश जन्म लेता हैं, जिस प्रकार संवेदनशील व्यक्ति का मोहभंग हो जाने के बाद वह आक्रोश करता हैं, उसी प्रकार व्यंग्य सामाजिक जीवन में व्याप्त भ्रष्ट प्रवृत्तियों को देखकर विद्रोही रूप में जन्म लेता हैं और उसका उद्देश्य समाज में व्याप्त भ्रष्ट प्रवृत्तियों का पर्दाफाश करके व्यक्ति, समाज, राष्ट्र को सचेत करके उनमें सुधार करना होता है।

१८. व्यंग्य एक क्रांतिकारी हैं, जिस तरह क्रांतिकारियों ने अंग्रेज सरकार की गुलामी से भारत को आजादी दी, उसी तरह स्वातोन्त्रोत्तर काल में सभी क्षेत्रों में व्याप्त भ्रष्ट प्रवृत्तियों - विसंगतियाँ, अन्तर्विरोध, असामंजस्य, अवसरवाद, दुमुँहापन, बेशर्मी, अन्याय, अत्याचार, बलात्कार, पाखण्ड, झूठ, फरेब, साजीश आदि से व्यंग्य ही स्वतंत्रता दे सकता हैं।

१९. व्यंग्य एक बौध्दिक, विवेकशील अभिव्यक्ति हैं।

२०. व्यंग्य करते समय व्यंग्यकार आक्रमक होता हैं, कही कही उसें गंदे और अश्लिल शब्दों का प्रयोग भी करना पड़ता हैं।

२१. निश्चय ही व्यंग्य एक सौद्देश्यपूर्ण विधा हैं, जिसके माध्यम से समाज सुधार का काम करके, सामाजिक जीवन की मुल्यों की रक्षा की जाती हैं, जिसके माध्यम से सत्यम्, शिवम्, सुंदरम की प्रतिस्थापना करने का प्रयास किया जाता हैं / की जाती हैं।

उपर्युक्त व्यंग्य की परिभाषाएँ और उसकी विशेषताओं पर विचार करने से हम व्यंग्य की परिभाषा इस प्रकार दे सकते हैं —

" व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक अभिव्यक्ति या रचना है, जिसमें व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र की समस्त बुराईयाँ, कमजोरियाँ, अंतर्विरोध, विसंगतियाँ, करनी और कथनी के अन्तरों की समिक्षा - भाषा को टेढ़ी भंगिमा देकर, उन्हें सुधार के लिए किया गया शाब्दिक प्रहार, जिसे हम व्यंग्य कह सकते हैं। "

व्यंग्य के विविध रूप —

व्यंग्य अपना उद्देश्य प्राप्त करने के लिए या अपने लक्ष्य के प्रति अग्रेसर होने के लिए अनेक प्रकार के साधनों का उपयोग करता हैं, जिनमें क्रमशः तीक्ष्ण वैदग्ध्य, विडम्बना, उपहास, हैयहास, निन्दाविनोद, कटाक्ष, प्रभर्त्सना और आक्षेप, खिल्ली उड़ाना, अर्धसत्य, भँड़ैती, ठठ्ठा उपहासात्मक स्वांग, फैबिक, ताना, आदि व्यंग्य के रूप एवं उपरूपों का सहारा लिया जाता हैं। व्यंग्य के ये जो रूप एवं उपरूप हैं, इनका क्षेत्र एवं इनकी मात्रा व्यंग्य की हैं। किन्तु किन्ही कारणों से ये अपना अलग अलग महत्व रखते हुए रचनाओं में स्थान पाते हैं। व्यंग्यकारों ने अपनी रचनाओं में समीचीन अभिव्यक्ति को प्रकट करने के लिए इन साधनों का उपयोग किया हैं। ये सभी उपरूप व्यंग्य में समाहित होकर उसकी शक्ति को अधिक बलवती करने में सहायक होते हैं। संक्षेप में इन व्यंग्य रूपों, उपरों की चर्चा आगे हम करेंगे।

१) तीक्ष्ण वैदग्ध्य —

अँग्रेजी "विट" का हिन्दी पर्याय "वैदग्ध्य" हो सकता हैं। तीक्ष्ण वैदग्ध्य का अर्थ हैं — बुध्दि, मेधा, तर्क, पांडित्य, विद्वता, हाजिरजबाबी, आदि। मनुष्य एक तर्कशील प्राणी हैं, जिसे ईश्वर ने बुध्दि याने वैदग्ध्यता प्रदान की हैं। मनुष्य की आयु जिस तरह बढ़ती जाती हैं उसमें वैदग्ध्य का विकास होता रहता हैं। वैदग्ध्य को हम बुध्दि और तर्क से युक्त हाजिरजबाबी या व्यवहार कुशलता कह सकते हैं। तीक्ष्ण वैदग्ध्य वह एक बौध्दिक विषय होने के कारण, वह विचार-शक्ति से परिपूर्ण हैं। तीक्ष्ण वैदग्ध्य का प्रयोग करनेवाले की पैनी दृष्टि हो सकती हैं। तीक्ष्ण वैदग्ध्य में प्रयोग करनेवाला व्यक्ति अपनी पैनी दृष्टि के कारण और प्रखर या तेज बुध्दि के कारण आलम्बन में "चुभन" और "छलना" की स्थिती उत्पन्न करता हैं। चुभन और छलना की स्थिति अधिक मात्रा में होने से आलम्बन में बेचैनी उत्पन्न होने से उसकी दृष्टि अपने दोषों पर गढ़ जाती हैं। तीक्ष्ण वैदग्ध्य अपने पैनी दृष्टि के कारण आलम्बन की बुराईयों को संशोधित कर उन्हें अपने तर्कपूर्ण प्रज्ञा के सहारे, नपेतुले शब्दों में ऐसी शाब्दिक फटकार सुनायी जाती हैं, जो आलम्बन के मस्तिष्क को कुरेद देती हैं, उसमें बेचैनी उत्पन्न होकर अपने गलतीयों या बुराईयों का एहसास होने लगता हैं, जिसके कारण वह बुराईयों के प्रति मुँह मोड़ लेता हैं। वहाँ तीक्ष्ण वैदग्ध्य का प्रयोग करनेवाले व्यक्ति के व्यक्तिगत विशिष्ठता या व्यक्तित्व का पत्ता चलता हैं।

२) विडम्बना —

वैदग्ध्य पर जिस प्रकार पश्चिमी साहित्य में पर्याप्त मात्रा में विचार हुआ हैं उसी प्रकार वक्रोक्ति जो की विडम्बना से मिलती जुलती हैं, उस पर "संस्कृत" साहित्य में पर्याप्त रूप से विचार किया गया हैं।

"वक्रोक्ति" शब्द संस्कृत में काव्य सम्प्रदाय से संबंधित है। यहाँ उसे "आयरनी" के अर्थ में स्वीकृत करते हैं और "आयरनी" की आन्तरिक प्रवृत्ति को व्यक्त करनेवाला शब्द है -- विडम्बना ।

जी॰जी॰ सेडविक के अनुसार "ईरान" शब्द का अर्थ "आयरनी" के समकक्ष आकर विडम्बना होता है, जिससे "निष्पन्मा" की ध्वनि निकलती है। अत: हम किसी को "निप" या "निष्पन्मा" कहे तो वह आडम्बरों, आपत्तियों से बच सकता है। और इस तरह विडम्बना का उपयोग व्यक्ति, समाज कल्यान के लिए किया जाता है।

विडम्बना में विडम्बनाकार जो बात कहता है उससे भिन्न अर्थ की अभिव्यक्ति करता है। विडम्बना में हम जिसके साथ विवाद करते हैं तब शब्दों के वास्तविक अर्थ को छिपाकर उसके विपरित हेयहास या दृढ़ता का आश्रय लेकर आलम्बन पर प्रहार करते हैं। विडम्बना में जो स्तुति की जाती है; वह एक प्रकार से आलम्बन पर आघात ही करते हैं। जैसे कौए की आवाज को कोयल की उपमा बहाल करना। विडम्बना का विश्लेषण करते हुए डा॰ मलय कहते हैं कि; --

> "यदि आप व्यंग्य के भाले से सीधी चोट करने के बदले, धनुष्य की तरह छद्म से विनम्रता में झुककर तीर की तरह चोट करे, प्यार के मुखौटा में (चुम्बन के साथ) छूरा भौंके या कष्ट की नग्नता से इस प्रकार सुसज्जित करे कि उसकी (पीडा को) स्पष्टता के साथ उत्पन्न अन्तर्द्वंद्व की अस्पष्टता का प्रभाव भी हो जो यदा कदा परिहास के छोर को भी स्पर्श करे तो वह विडम्बना है।" [१]

---

१ "व्यंग्य का सौंदर्यशास्त्र", डॉ॰ मलय, १९८३, पृ॰१०६।

विडम्बना सामाजिक जीवन में जहाँ कहीं विषमता दिखाई देती हैं, वहाँ विडम्बना अधिक कार्यरत होकर उन विषमताओं पर प्रहार करती है। यह एक व्यंग्य का ही उपभेद हैं, और इसका भी उद्देश्य समाज के ढकोसके, पाखण्ड, अन्तर्विरोध, बुराईयाँ, भ्रष्ट नीति आदि पर प्रहार करके समाज सुधार का काम किया जाता हैं।

३) उपहास —

उपहास, मनुष्य स्वभाव में आत्मगौरव की भावना में पा सकते हैं। आत्मगौरव की भावना से प्रेरित होकर और अपनी पूर्व हीनता भावनाओं के कारण वह हमेशा दूसरों की कमियाँ समाज के सामने प्रकाशित करके, समाज में अपनी प्रतिष्ठा या श्रेष्ठता निर्माण करने का प्रयास करता हैं। उपहास द्वेश भावना के कारण निर्माण होता हैं। उपहास की परिभाषा इस प्रकार दी जाती हैं —

> " व्यक्ति या वस्तु को क्रीडा या विनोद या मजाक करने के लक्ष्य को लेकर की गई क्रिया या प्रयत्न, जो कि हास्योन्मुखी भाषा में उसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति उद्भूत होता हैं, उपहास हैं। " [१]

उपर्युक्त परिभाषा से यही कहा जाता हैं कि किसी व्यक्ति को नीचा दिखाने के उद्देश्य से उस व्यक्ति का खिलवाड़ या मजाक करने का प्रयत्न किया जाता हैं और उससे जो सहानुभूति रहित हास्य निर्मान होता है। उसे उपहास ऐसा कहा जाता हैं। उपहास एक व्यक्ति के प्रति अपने व्यक्तिगत सम्बधों पर आधारित होता हैं। व्यक्ति के दुर्गुणों, उसके आडम्बरों, कमियों को समाज के सामने प्रकाशित करने से व्यक्ति अपने दुर्गुणों एवं कमियों का त्याग

---

१ "व्यंग्य का सौंदर्यशास्त्र", डॉ॰मलय - पृ॰१३२।

करके समाज में अपनी प्रतिष्ठा या श्रेष्ठता निर्माण करने का प्रयत्न करे, वही व्यक्ति सुधार की भावना उपहास में होती हैं।

४) हेयहास —

हेयहास में घृणा एवं तिरस्कार जैसे मनोविकार विद्यमान रहते हैं, जो समाज जीवन में व्याप्त आड़म्बर, दुर्गुणों, विकृतियों, अन्तर्विरोध, असामंजस्य, दुमुँहापन, अन्याय, अत्याचार, भ्रष्ट रूढीपरम्पराएं आदि के प्रति मनुष्य के मन में तिरस्कार एवं घृणा के भाव निर्मान करके उन दुर्गुणों से बचके रहने की प्रवृत्ति मानव के मन में निर्माण करता हैं।

हेयहास की परिभाषा देते हुए डॉ॰ मलय कहते हैं, कि, —

" बुराईयों पर विजय पाने हेतु या सामाजिक सुरक्षा के प्रति तिरस्कार एवं घृणा के अस्त्रों से उद्वेलित होनेवाली विकृति हास्याभिव्यक्ति हेयहास हैं। " [१]

५) कटाक्ष —

सामाजिक जीवन में व्याप्त विकृतियाँ अनपेक्षित रूप से व्यंग्यकार के सामने आने से वह अपने क्रोध को झटके से व्यक्त करता है आर आवेश के मारे संचालित होकर कटाक्ष की रचना करता हैं। कटाक्ष आँखो के द्वारा भी प्रकट किया जाता हैं और कुछ थोडे शब्दों को तीखे धारदार अर्थपूर्ण बनाकर आलम्बन के उपर प्रहार किये जाते हैं। कटाक्ष का प्रहार अत्यंत कठोर होने से आलम्बन अपने दुर्गुणों को तुरन्त ही छोड़ देने को बाध्य हो जाता हैं। कटाक्ष की रचना करना मनुष्य की सहज स्वाभाविक प्रवृत्ति हैं। कटाक्ष की

---

१ "व्यंग्य का सौंदर्यशास्त्र", डॉ॰ मलय - पृ॰१३८।

12547
A -

परिभाषा "ह्युमर इन्साइक्लोपीडियां ब्रिटेनिका" इस ग्रंथ के पृष्ट ८८६ में इस प्रकार दी गई है — "जहाँ क्रोध की भावना उभारी जाती है, वहाँ तिक्त परिहास का भाव कुप्त हो जाता है। वहाँ तिक्त परिहास "कटाक्ष" (जिसका अर्थ है पहुए से खरोचना) में परिवर्तित हो जाता है।"

६) प्रभर्त्सना एवं आक्षेप —

प्रभर्त्सना में अनेक व्यंग्यरूप या व्यंग्य के उपरूप समाहित हैं, इसका उपयोग व्यंग्यकार मजबुरी की स्थिति में करता है। व्यक्तिगत द्वेषभावना के कारण आलम्बन पर आक्षेप किया जाता है। प्रभर्त्सना में सुधार की अपेक्षा बदलने की तीव्र इच्छा होती है, इसलिए उसमें आक्रोश रहता है। इसमें व्यंग्यकार का उद्देश्य अधिकांश रूप से सामाजिक बुराईयों का विनाश करना होता है।

प्रभर्त्सना के बारे में यह विचार सराहणीय है कि, —

" व्यंग्य के लिए यथार्थ ही येथेष्ट विषय है, पर जहाँ यथार्थ के फेर में पडकर लोग रक्तात्प ब्यौरों को जुटाने में ही, ऐतिहासिक साधुता का पांडित्य-प्रदर्शन करने में ही रह जाते हैं, वहाँ आलम्बनों को हम निंद्य तो समझ लेते हैं, पर हँस नही पाते।" [१]

रचनाकार जब अपनी प्रहारात्मक स्थिति में कहीं आगे बढ़ता है और वह कही कारणें से व्यंग्य के रूपों-उपरूपों की रचना करने में असफल होता है तो वह आक्रोश का सहारा लेकर अपना अधुरा काम पूरा करता है। यही कारण है कि आक्रोश समन्वित प्रभर्त्सना और आक्षेप में तीव्र सामाजिक बदले की भावना विद्यमान रहती है।

---

१ "व्यंग्य का सौंदर्यशास्त्र", डॉ॰ मलय — पृ॰१४९।

प्रभर्त्सना और आक्षेप का उद्देश्य शत्रु का नाश करना है, फिर भी दोनों में भेद है —

" प्रभर्त्सना का विषय लज्जा और निन्दा से भरपूर रहता है जो विस्मृति के गर्भ में रहती है किन्तु आक्षेप चाहेगा कि उसका शिकार डरावनी बीमारी से मरे या आत्महत्या करे । " [१]

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि आक्रोश अधिक क्रूर या कठोर होता है और प्रभर्त्सना की अपेक्षा आक्षेप से आक्रोश की स्थिती और भी उजागर होती है ।

७) खिल्ली उडाना —

इसमें आलम्बन की निन्दा स्पष्ट से नही की जाती, बल्कि कथन को याने शब्दों का (परिहास) इस प्रकार खिलवाड़ कर दिया जाता है कि विशुध्द निन्दा के कारण आलम्बन की धज्जियाँ उड़ जाती है और जिससे वह अपना बचाव भी नही कर पाता, वह एक असमर्थ व्यक्ति बन जाता है ।

खिल्ली उड़ाते समय आलम्बन विसंगतियाँ और मूर्खताओं का पात्र होता है जिसके कारण वह अपना बचाव नही कर पाता । इन विसंगतियों का जाल उसके चारों और फैल जाता है, फलस्वरूप आलम्बन दयनीय या एक अजीब-सी मन स्थिति में फँस जाता है और अपना बचाव नही कर पाता ।

---

१ "व्यंग्य का सौंदर्यशास्त्र", डॉ॰ मलय — पृ॰१५४ ।

८) अर्थभक्ष्य —

अर्थभक्ष्य में शब्दों की तोड़-मरोड़ करके या शब्दों का अर्थपरिवर्तन करनेवाले परिहास का वर्णन करके किसी व्यक्ति के चरित्र पर खरोंच उत्पन्न की जाती हैं या उसकी मसखरी की जाती हो, अुसे अर्थभक्ष्य कहा जाता हैं।

९) भड़ैती —

"यह भाग में प्रयुक्त परिहास विधि हैं जिसमें व्यंग्य के संमिश्रण से धूर्तता की खिल्लीयाँ उड़ायी जाती हैं। इसमें धूर्तों का चरित्र रहता हैं और खूब हँसाया जाता हैं।" [१]

१०) ठट्टा —

ठट्टा के बारे में डॉ॰ मलय कहते हैं कि, —

" ठट्टा में एक ओर जहाँ परिहास की अधिकता रहती है, वहाँ दुसरी ओर उसमें खिल्ली उड़ाने का अपना एक अलग तरीका होता हैं। अलग तरीका इसलिए कि असका व्यंग्य होता तो हल्के किस्म का हैं, पर चुभने में वक्रोक्ति जैसा नुकीला होता है।" [२]

११) उपहासात्मक स्वांग (मिमिकरी) या नकल —

उपहासात्मक स्वांग का स्पष्टीकरण करते हुए डॉ॰ मलय कहते हैं कि, —

---

१ "व्यंग्य का सौंदर्यशास्त्र", डॉ॰ मलय - पृ॰१५४।

२ " — वही — - पृ॰१५४।

" उपहासात्मक स्वांग का रूप छोटी-छोटी व्यंग्य रचनाओं में उपलब्ध होता है। इसमें लेखक किसी भी घटना की कल्पना करके व्यक्ति की धूर्तता या उसके तथाकथित सामाजिक मुखौटे को या व्यक्तिगत रूप से गलत आचरण को उघाडने में सफल होता है। " [१]

उपहासात्मक स्वांग व्यंग्य का निम्नतम् रूप है इसमें नकल करके व्यक्तियों की कमियों की खिल्ली उड़ायी जाती है। जैसे नेता के भाषण की नकल करके उसकी आदतों की पुनरावृत्ति करके उसे लोगों के सामने स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करके उनके मुखौटे का पर्दाफाश किया जाता है।

१२) <u>फैबिल</u> —

फैबिल की रचना मनगढ़न्त कहानियों में की जाती है। इसमें पशु-पक्षियों के कृत्रिम वार्तालाप के माध्यम से लेखक स्वयं की धारणा या विचारों को एक प्रभावपूर्ण ढंग से दबाव के साथ व्यक्त करता है। वैज्ञानिक युग के कारण लोगों का विश्वास इस प्रकार के मनगढ़न्त कहानियों से उठ गया और इस व्यंग्य विधि रूप का अन्त भी हो गया।

१३) <u>ताना</u> —

ताना मारना नित्य प्रयोग में आता है। इसका प्रयोग हम नायक-नायिकाओं के प्रेमपूर्ण वार्तालाप में देख सकते हैं। और व्यंग्य में इस तरह के रूमानीपन को (प्रेमपूर्ण वार्तालाप) महत्व न होने के कारण इसका व्यंग्य में महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। उदाहरण के तौर पर-बिहारी का साहित्य।

---

१ "व्यंग्य का सौंदर्यशास्त्र", डॉ• मलय, १९८३ - पृ•१५६।

उपर्युक्त विवेचन से यह ज्ञात होता है कि यह सब व्यंग्य रूप या उपरूप व्यंग्य के ही अंग हैं, ये सब एक ही भावना को लेकर आगे बढ़ते हैं। सभी रूपों - उपरूपों का उद्देश्य एक ही है और यह अपने उद्देश्य में सफल होते हैं। इनकी मात्रा व्यंग्य की ही है, किन्तु सब अपने अपने स्थान पर महत्व रखते हैं। जिस तरह कपड़ों की मैल को विभिन्न प्रकार के साबुन से धो डाला जाता है उसी तरह व्यक्ति और समाज की गंदगी को व्यंग्य इन रूपों - उपरूपों से धो डालता है। सभी व्यंग्य रूपों और उपरूपों का एक ही उद्देश्य है — जो बुराईयों, कमियों, विसंगतियों, अन्तर्विरोध का पर्दाफाश करके सत्य की प्रतिष्ठापना करना।

हास्य और व्यंग्य में परस्पर अन्तर —

प्राचीन काल से विद्वानों ने हास्य के भेद के रूप में व्यंग्य की चर्चा की है और आज-तक लेखन के स्तर पर हास्य व्यंग्य की चर्चा हो रही है। हास्य का उद्देश्य केवल शुध्द मनोरंजन है तो व्यंग्य का उद्देश्य सामाजिक चेतना को विसंगति, अन्याय, अत्याचार, पाखण्ड, भ्रष्ट रूढ़ी - परम्पराएं तथा भ्रष्ट नीति मुल्यों के खिलाफ जगाना है। इसी कारण हास्य और व्यंग्य को एक नही माना जा सकता। यह सच है कि हा हास्य के साथ व्यंग्य और व्यंग्य के साथ हास्य अभिव्यक्ति होता है, फिर भी दोनों के उद्देश्य और कर्मक्षेत्र की दृष्टि से एक सीमारेखा स्पष्ट दिखाई देती है।

हास्य का उद्देश्य शुध्द मनोरंजन होता है, उसमें किसी प्रकार का विकार दिखाई नही देता तो व्यंग्य का उद्देश्य समाज में व्याप्त असंगति, अन्तर्विरोध, बुराईयाँ और कमियों को नंगा करके उनको प्रकाश में लाता और उनमें प्रहार करके दोषों का सुधार करना है।

हास्य का सम्बन्ध हृदय से है, उसके द्वारा जीवन के तनावपूर्ण वातावरण को दूर किया जाता है, हास्य में आलम्बन के प्रति सहानुभूति रहती है। हास्य में स्नेह, करुणा जैसे कोमल भावनाओं का समावेश रहता है। जबकि व्यंग्य का सम्बन्ध मनुष्य के प्रज्ञा से है। उनमें आलम्बन के प्रति सहानुभूति विरोधी भाव जैसे घृणा, तिरस्कार, क्षोभ रहते हैं। जो सामाजिक मुल्य टूटने योग्य हैं उन्हें तोड डालना ही व्यंग्य का धर्म है। इसीकारण बालेन्दु शेखर तिवारी कहते हैं --

" इस दृष्टि से हास्य सुन्दर की कामना करता है और व्यंग्य न्याय की पूकार करता है। स्पष्ट ही हास्य अपेक्षा व्यंग्य में तेजी और गर्मी अधिक होती है। " [१]

स्पष्ट है कि व्यंग्य बुराईयों का प्रतिकार करके उनके खिलाफ आवाज उठाकर न्याय की मांग करके, सत्य की प्रतिस्थापना करता है। हास्य का जन्म असंगति के बीच आनन्दवश होता है, उसके मूल में एक प्रकार से सुख की अनुभूति होती है लेकिन व्यंग्य का जन्म सामाजिक जीवन में व्याप्त असंगति, अन्तर्विरोध, बुराईयों के बीच आक्रोशवश होता है, असके मुल कष्टानुभूति है और वह एक विद्रोही भाव है।

हास्य का धरातल काल्पनिक होता है किन्तु व्यंग्य यथार्थ जीवन के कटु सत्यों को साक्षी बनाकर जीवन की वास्तविकता को अभिव्यक्ति देता है। हास्य का भाषान्तर सहज सम्भव है। लेकिन व्यंग्य का अनुवाद करना कठिन है क्योंकि व्यंग्य देश, काल, जाति एवं भाषा सापेक्ष है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट दिखाई देता है, हास्य और व्यंग्य एक ही नाणे की दो बाजु है लेकिन दोनों में उद्देश्य एवं कर्मक्षेत्र के बारे में परस्पर अंतर है। व्यंग्य हास्य का भेद नही रहा है, व्यंग्य, एक जबाबदार

---

१ "हिन्दी का स्वातोन्त्रोत्तर हास्य और व्यंग्य", डॉ॰बालेन्दु शेखर तिवारी १९७८ - पृ॰५९।

नागरिक की भाँति अपना कार्य कर रहा हैं। उसका उद्देश्य असंगति देखकर हँसना नही रहा, बल्कि उस असंगति, विकृति को प्रकाश में लाकर उन पर प्रहार करके, उन दोषों का सुधार करना व्यंग्य का उद्देश्य रहा हैं।

हिन्दी साहित्य में व्यंग्य लेखन की परम्परा —

व्यंग्य का अस्तित्व हिन्दी साहित्य के आदिकाल से लेकर आज तक के विविध कालखण्डों में भी मिलता हैं। व्यंग्य तो वेदों में भी मिलता हैं। नाट्यशास्त्र में भी व्यंग्य प्राप्त होता हैं। देव, दानव और मानव शुरू से ही व्यंग्य का प्रयोग करते आये हैं। इतिहास का ऐसा कोई भी कालखण्ड नही मिलता कि, जिसमें व्यंग्य का सहारा न किया हो। हिन्दी साहित्य के विविध युगों के समाज, सामाजिक मुल्यों तथा मानवीय पीड़ा को समझने के लिये जिन्होने व्यंग्य को माध्यम के रूप में चुना था, ऐसे साहित्यकारों में निम्नलिखित साहित्यकार प्रमुख हैं। हिन्दी व्यंग्य के उद्भव और विकास के मूल में संस्कृत एवं प्राकृत की साहित्यिक परम्परा विद्यमान हैं।

संस्कृत के नास्तिक शिरोमणि कवि चार्वाक के काव्य में पहली बार व्यंग्य ने स्थान पा लिया। इनके काव्य में व्यंग्य की आत्मा ने पहली बार स्थान पा लिया हैं। चार्वाक ने अपने काव्य के माध्यम से वैदिक कर्मकाण्ड एवं ब्राम्हण धर्म पर कटु प्रकार किये हैं। उनकी उक्तियों के मूल में असन्तोषजनित सुधारमूलक व्यंग्य की आभा दिखाई देती हैं। चार्वाक ने अपने समय के धर्मशास्त्र की धाज्जियाँ उड़ाई हैं और अपने व्यंग्य बाणों से स्वर्ग-मोक्ष की कल्पना पर प्रहार किया हैं।

" पशुश्चेन्निहत: स्वर्ग ज्योतिष्टोमें गमिष्यति ।
स्वपिता यजमाने न तंत्र कस्मान्न हिंस्यते ।। " [१]

---

१ "हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य", डॉ॰बालेन्दु शेखर तिवारी, १९७८ - पृ॰७८।

अर्थात यज्ञ की वेदी पर पशु का बलिदान करने से वह अगर सचमुच स्वर्ग चला जाता हैं, तो फिर तुम अपने पिता का ही बलिदान क्यों नही कर देते, ताकि वे सिधे स्वर्ग पहुँच जाएँ ? इसतरह की कटु बातो के सहारे चार्वाक ने अपनेसमय के धर्मशास्त्र की कटु आलोचना कर अपनी व्यंग्यात्मक प्रतिभा का परिचय दिया हैं। भले ही चार्वाक का मत आज तक समाज में मान्यता नही प्राप्त कर सका लेकिन चार्वाक की व्यंग्य प्रतिभा को मानना ही पड़ेगा। चार्वाक का कोई स्वतंत्र ग्रंथ नही मिलता, जहाँ कही उनकी उक्तियाँ उध्दृत की है वहाँ उनकी व्यंग्य प्रतिभा का पत्ता चलता हैं।

समाज में होनेवाले अंतर्विरोध, असंगति, अनैतिकता के अनुसार व्यंग्य की आवश्यकता होती हैं। साहित्य के इतिहास को देखने से यह बात समझ में आती हैं कि, प्रत्येक युग की जरूरत के अनुसार ही उस युग का निबंधकार मिलता हैं। हिन्दी के आदिकालीन साहित्य सिध्द, नाथ और जैन साहित्य में व्रत-वैकल्य, पूजा-पाठ करनेवाले भोंदु पंडित, अनैतिक, पापपूर्ण आचरण कर गंगा में स्नान कर पूण्यकर्म माननेवाले, पौराणीक धर्म का आचरण करनेवालों पर साहित्यिक व्यंग्य का प्रहार किया हैं। जिसके कारण सिध्द, नाथ, और जैन साहित्य जन साधारण में अधिक मर्मस्पर्शी सहज, सरल एवं लोकप्रिय बन सका हैं।

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में व्यंग्य लेखन तुलशी, कबीर, सुरदास आदि ने भी किया है। सुरदास ने अपने "भ्रमरगीत" रचना में सगुण भक्ति की श्रेष्ठता सिध्द करने के हेतु निर्गुण भक्ति पर व्यंग्य प्रहार किये हैं। इन संत कवियों में कबीर का स्थान महत्वपूर्ण हैं। कबीर हिन्दी के वे पहले व्यंग्यकार हैं, जिन्होने समाज में फैले बाह्यांडम्बर को भेदकर सत्य की खोज करने का प्रयास किया हैं। कबीर ने उपहास और मजाक के स्तर पर व्यंग्य उठाकर तत्कालीन समाज पर प्रहार किया हैं। कबीर की वाणी ने वैयक्तिक, सामाजिक, तथा धार्मिक असंगति पर व्यंग्यात्मक प्रहार किये हैं। कबीर ने अपने समय के हिन्दु-

मुस्लिम भेद-भाव, जाँति-पाँति, मुर्तीपूजा, रूढ़-परम्परायें आदि पर कठोर प्रहार किया है। कबीर जी ने शाश्वत जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठापना के लिए व्यंग्य का प्रयोग किया है। कबीर ने चिल्ला-चिल्लाकर पंडित और मुल्ला दोनों के पाखण्डपूर्ण आचरण का भण्डा फोड करना आरम्भ किया था। अप्रतिम साहस के साथ कबीर ने अपने समय की हर एक कुप्रथा पर प्रहार करके अपने क्रांतिकारी व्यक्तित्व का परिचय दिया है।

हिन्दी साहित्य के रीतिकाल में बिहारी, रहीम, रसखान आदि की रचनाओं में व्यंग्य ने स्थान पा लिया है। बिहारी ने प्रजाहित भूल अपनी नई नवेली दुल्हन के साथ रति-क्रिडा रत राजा जयसिंह को अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है। बिहारी की मुख्य प्रवृत्ति श्रृंगारिक होते हुए भी "बिहारी सतसई" में क्षुद्र, महत्वाकांक्षी, हीन व्यक्तियों पर प्रहार किया है।

भक्तिकाल और रीतिकाल के दीर्घकाल में व्यंग्य की मात्रा कुछ कम दिखाई देने लगी थी, ऐसे समय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने फिर एक बार व्यंग्य की प्रवृत्ति को साहित्य में उद्दीप्त कर दिया। भारतेन्दु नवीन युग की सुधार चेतना से प्रभावित थे। अंग्रेजी शासन विरोध में उनके मन में आक्रोश था। देश की पराधिनता और सामाजिक कुरीतियों पर भारतेन्दु युगीन साहित्यकारों ने व्यंग्यात्मक प्रहार किया है। प्रस्तुत युग के समाज में बाल-विवाह, अनमेल-विवाह, नरबलि, वृध्द-विवाह, बहु-विवाह, जैसी प्रथायें थी। पर्दापध्दति, वेश्यागमन, समुद्रयात्रा, पंडितों के कुकर्म, अंधविश्वास, छूआ-छूत, जमींदारी, सुदखोरी, अंध रूढि-परम्परायें, अंग्रेजी शासन का दमन-चक्र, पाश्चात्य संस्कृति का भारतीय संस्कृति पर बढ़ता प्रभाव आदि सभी दृष्टि से भारतेन्दु युगीन समाज पथभ्रष्ट हो चुका था। भारतेन्दु कालीन साहित्यकारों ने सामाजिक परिस्थितियों का गम्भीर अध्ययन कर, अपने समाज की विसंगति पूर्ण स्थिति सुधारने के लिए साहित्य की व्यंग्य विधा के माध्यम से प्रस्तुत समाज पर कटाक्ष किये, जिनमें भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालकृष्ण भट्ट,

प्रेमघन, प्रतापनारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी, बालमुकुन्द गुप्त आदि साहित्यकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं।

स्वातंत्र्यपूर्व हिन्दी साहित्य में व्यंग्य का नेतृत्व "सुर्यकान्त त्रिपाटी निराला" ने किया हैं। भारतेन्दु युग के समान ही इस युग की परिस्थिति रही। भारत की आम जनता पर अंग्रेजों तथा जमींदारों, सामन्तों ने जो अन्याय - अत्याचार किये उन्ही पर प्रकाश डालने का कार्य "निराला" ने अपने "काव्य" और "प्रेमचन्द" ने आपनी कहानियों, उपन्यास द्वारा किया है और इस कार्य के लिए उन्होने माध्यम के रूप में साहित्य की व्यंग्य विधा को ही अपनाया हैं। प्रेमचन्द का "कफन" और निराला का "कुकुरमुत्ता" प्राय: एक ही समय की रचनाएँ हैं। इस रचनाओं में वर्णित घीसू तथा माधव समाज के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो कुकुरमुत्ता का वर्ग हैं। और जमींदार गुलाब के वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। भारत में जैसे जैसे यह दमन, शोषण, की प्रवृत्ति बढ़ती गयी, वैसे वैसे बुध्दिजीवी वर्ग उसका विरोध करने के लिये तैयार हुअे।

स्वातंत्र्य प्राप्ति के पूर्व देश में अंग्रेजी सत्ता होने के कारण लोगों पर अन्याय, अत्याचार, बन्धन और आतंक फैला हुआ रहता था लेकिन स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद देश के सभी अंगों में परिवर्तन होने की अपेक्षा की गई थी, फलत: देश की आम जनता का मोहभंग हुआ। गोरे गए काले आये लेकिन परिस्थिति में कोई परिवर्तन नही हुआ। स्वातंत्र्य पूर्व काल की अपेक्षा स्वातंत्र्योत्तर काल में अन्याय, अत्याचार, व्यभिचार, कथनी और करनी में फर्क, दुमुँहापन, बेबनाव, अनैतिकता, पाखण्ड, अवसरवाद, भ्रष्टाचार आदि के बादल देश की जनता पर मँडराते हुए दिखाई दिये। ऐसी स्थिति में व्यंग्य साहित्यकार चुप नही बैठे। अत: अनेक व्यंग्यकार जिन्होने फोटोग्राफर की तरह अपने समाज के नग्न रूप का पर्दाफाश किया हैं।

हिन्दी व्यंग्य के विकास में योगदान देनेवालों में शीर्षस्थ व्यंग्यकार हैं -- हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, रविन्द्रनाथ त्यागी, डॉ॰ नरेन्द्र कोहली, लतीफ घोंघी, डॉ॰ बरसानेलाल चतुर्वेदी, डॉ॰इन्द्रनाथ मदान, डॉ॰ के॰पी॰ सक्सेना, रोशनलाल सुरीवाला, बालेन्दु शेखर तिवारी, धूमिल आदि।

हरिशंकर परसाई जी ने व्यंग्य लेखन का प्रारम्भ "वसुधा", "प्रहरी", और "परिवर्तन" आदि पत्रिकाओं के माध्यम से किया। "कबीर खड़ा बाजार में", "मैं कहता आँखिन देखी", "माटी कहे कुम्हार से", "सुनों भाई साधो", जैसे आलेखों द्वारा परसाईजी ने तीक्ष्ण व्यंग्य का सृजन किया। यह लेख ऐसी "आग" थी, जिसके विचारों की चिन्गारियाँ सबकों आकर्षित करती रही। आज परसाई जी की अनेक रचनाएँ प्रकाशित हो गई हैं, जिनमें "पगडंडियों का जमाना", "पाखण्ड का अध्यात्म", "बेईमानी की परत", "सदाचार का ताबीज", "हँसते हैं रोते हैं", "ठिठुरता हुआ गणतंत्र"आदि महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं।

शरद जोशी का भी पत्रकारिता के साथ अटूट सम्बन्ध रहा हैं। व्यंग्य विधा को सशक्त करने में इन्होने भी बहुत बड़ा योगदान दिया हैं। शरद जोशी जी ने अपने व्यंग्य के तीखे प्रहार से सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक और प्रशासनिक विकृतियों का पर्दाफाश किया हैं। "परिक्रमा", "किसी बहाने", "रहा किनारे बैठे", "तिलस्म", "मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ", "हम पथभ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे", आदि कृतियों द्वारा जोशी जी ने समसामयिक विद्रूपताओं को समाज के सामने प्रकाशित किया। आज भी वे "नवभारत टाईम्स" के "प्रतिदिन" स्तंभ के अंतर्गत लिखते हैं।

नरेन्द्र कोलली जी "धर्मयुग" पत्रिका से व्यंग्य रचनाएँ प्रकाशित करते रहे। उनकी पहली व्यंग्य रचना हैं -- "मै बच्चों से घृणा करता हूँ"। इस रचना में कोहलाजी ने बच्चों की बुरी आदतों को लेकर व्यंग्य का प्रहार किया हैं। लतीफ घोंघी के "अमृत-संदेश" पत्रिका में प्रकाशित

"व्यंग्य-प्रसंग", तथा "विलासपुर टाइम्स" पत्रिका में प्रकाशित "गुरू की विलम" स्तंभ व्यंग्य लेखन की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं।

डॉ॰ बालेन्दु शेखर तिवारी जी ने भी अन्य व्यंग्यकारों के समान पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्यात्मक लेख लिखते रहे। "ज्योत्स्ना" पत्रिका में प्रकाशित "हाँ, हाँ, भारत दुर्दशा देखि न जाई - मिस्टर भारतेन्दु" इस स्तंभ के अंतर्गत व्यंग्य रचना का सृजन करते रहे। इन व्यंग्यकारों के अतिरिक्त "रामेश्वर शुक्ल अंचल" का "गणतंत्र की देन" (१९८१) "फनिश्वरनाथ रेणु" का "उत्तर नेहरू चरितम्" (१९८८) "श्री मुद्राराक्षस" का "सुनो भाई साधो" (१९८४) "डॉ॰सिध्दनाथ कुमार" का "चमचे वही रहे" (१९८७) आदि व्यंग्य रचनाएँ व्यंग्य विधा के विकास में योगदान दे रही हैं। यह कहना सच हैं कि व्यंग्य विधा की ओर आज अनेक निबंधकार, कहानीकार, उपन्यासकार, और कवि आकर्षित हुए हैं। आज हिन्दी में व्यंग्य लेखकों की एक लम्बी - सी कतार लगी हुई हैं। हिन्दी व्यंग्य विधा आज प्रौढत्व को प्राप्त कर चुकी हैं। वर्तमान भारतीय जीवन में व्यंग्य विधा ही सबसे अधिक - लोकप्रिय विधा रही हैं। जो ईमानदार है और वर्तमान भारत के जनता को सजग, सतर्क करके संघर्ष के लिए चेतावनी दे रही हैं।

पहले व्यंग्य किसी व्यक्ति पर किया जाता था, बाद में सामाजिक कुरुपताओं और धार्मिक परम्पराओं पर किया जाने लगा। उसके बाद राजनीति को लक्ष्य करके व्यंग्य रचनाओं का सृजन होता रहा लेकिन आज तो जीवन के सभी अंगो, उपांगो, हर एक विषय, दल, देश, विदेश पर व्यंग्य किया जा रहा हैं। इसके पूर्व व्यंग्य सीमित तथा अन्य माध्यमों से प्रकट हुआ करता था लेकिन वर्तमान भारत की बढ़ती हुई विसंगतियों को देखकर व्यंग्य लेखकों ने नंगो को नंगा दिखलाना शुरू किया हैं। यह व्यंग्य विधा के विकास का ही परिणाम हैं।

आज देश में अनेक राजनीतिक, प्रशासनिक, सामाजिक तथा धार्मिक विकृतियाँ व्यंग्य लेखन को नई भूमि निर्माण कर रही हैं। आज जीवन के शाश्वत जीवन मुल्यों का -हास हो रहा हैं। जीवन मुल्यों में परिवर्तन हो रहा हैं, अतः व्यंग्य लेखन जीवन से साक्षात्कार करता हैं। अन्य विधा लेखकों की अपेक्षा व्यंग्य लेखकों को ही नए जीवन मुल्यों की तलाश करनी पड़ी हैं जो भारत के हर एक व्यक्ति को परस्पर सहयोग देकर विकास की नई नई सिढ़ीयाँ पार कर सके, यही मजबूरी हिन्दी व्यंग्य विधा के विकास का कारण बन गई।

व्यंग्य के प्रकार —

स्वातंत्र्यपूर्व काल में व्यंग्य को हास्य का भेद मानते थे, उसे हास्य के अन्तर्गत ही स्वीकार करते थे। लेकिन स्वातंत्र्योत्तर काल में हास्य और व्यंग्य में फर्क किया जाने लगा और व्यंग्य को हास्य से अलग माना गया। व्यंग्य को हास्य का भेद माननेवाला विद्वानों का वर्ग व्यंग्य के वर्गीकरण से कतराता हैं। विद्वानों ने व्यंग्य का जो वर्गीकरण किया हैं, उनके अनुसार व्यंग्य का वर्गीकरण निचे दिया अनुसार हो सकता हैं —

१) व्यक्तिगत व्यंग्य । २) समष्टिगत व्यंग्य ।

१) व्यक्तिगत व्यंग्य — १. व्यक्तिगत, २. आत्मपरक व्यंग्य ।

२) समष्टिगत व्यंग्य — राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, प्रशासनिक आदि ।

१) व्यक्तिगत व्यंग्य --

व्यक्तिगत व्यंग्य व्यक्ति को लक्ष्य करके किया जाता है। इसमें विशिष्ठ व्यक्ति, वकील, डॉक्टर, इंजीनियर, अध्यक्ष, दूकानदार आदि को लक्ष्य कर उनके दुर्गणों एवं बुराईयों पर प्रहार किया जाता है। किसी व्यक्ति पर व्यंग्य कसना बड़े साहस का काम होता है, असके लिए ठोस यथार्थ की व्यंग्यकार को पहचान होनी चाहिए, तभी वह व्यंग्य लिख सकता है। व्यक्तिगत व्यंग्य बदले की भावना से प्रेरित होकर नही किया जाता क्यों कि व्यंग्य लेखन का उद्देश्य होती है कि व्यक्ति के दोष दिखाकर, उसमें सुधार करना, मगर पूरानी दुश्मनी से किसी व्यक्ति पर की गई व्यंग्य रचना अशुभ मानी जाती है।

कभी कभी मनुष्य इतना निर्लज्य व्यवहार करता है कि उसे पशु की संज्ञा दी जाती है। वह मानवता के महान नीति मुल्यों को भूल जाता है तब ऐसे लज्जाहीन, बेशर्म लोगों पर व्यंग्य रचना की जाती है। डॉ॰ श्रीनारायण चतुर्वेदी ने व्यक्तिगत व्यंग्य के बारे में लिखा है -- "जिस प्रकार हास्य में अशिष्ट या अश्लील हो जाने का खतरा है उसी प्रकार व्यंग्य में भी बड़ा खतरा व्यक्तिगत आघात हो जाने का रहता है। लोग विरोधी के तर्को से परास्त होने पर प्रायः बुरा नही मानते किन्तु जब उनकी किसी बात को व्यंग्य बाण द्वारा हास्यास्पद बना दिया जाता है तो उनका अहम् तिलमिला उठता है। कोई भी व्यक्ति जनता की निगाह में हास्यास्पद नही बनना चाहता। इसलिए व्यंग्य करते हुए भी उसे व्यक्तिगत स्तर से ऊपर अवैयक्तिक बनना वास्तव में बड़ा कठिन है, क्योंकि व्यक्ति और उसके कार्यों या विचारों में बड़ा कठिन है, व्यक्ति और उसके कार्यों या विचारों में बड़ा ही सुक्ष्म अन्तर होता है। लेखक वह नही जान जाता कि सद्भावना से किया हुआ अवैयक्तिक व्यंग्य भी किसे और कब बुरा लग जायेगा।" [१]

---

१ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", डॉ॰बापूराव देसाई, पृ॰४२।

हम प्राय: अनुभव करते हैं कि हर एक मनुष्य की अलग अलग प्रवृत्ति होती हैं। करनी और कथनी में फर्क, धोखाबाजी, छळ, कपट, अनैसर्गिकता, झूठ, लालसी, यश प्राप्ति के साधन, अवसरवादी, ढोंग आदि कई प्रकार के व्यवहार से मनुष्य की प्रवृत्ति का निर्देश होता हैं। प्रतिष्ठा प्राप्ति, स्वार्थसिध्दि से मुनष्य की प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति होती हैं। अत: वह कहीं नरम, तो कहीं प्रहारात्मक दिखाई देती हैं।

हम देखते हैं कि आज के वैज्ञानिक युग में मनुष्य की प्रवृत्ति में बदल हो रहा हैं, उसके "कथनी और कथनी" में फर्क आकर मनुष्य दिन-ब-दिन स्वार्थप्रिय प्राणि बन रहा हैं। तो ऐसे प्रवृत्ति को लक्ष्य करके व्यंग्य रचनाओं का सृजन हो रहा हैं।

२) आत्मपरक व्यंग्य —

प्राय: देखा जाता हैं कि व्यंग्य रचना दूसरों पर की जाती हैं, किसी एक व्यक्ति को लक्ष्य कर व्यंग्य करना आसान हैं, उससे भी आगे खुद अपने उपर स्वयं ही व्यंग्य रचना करना यह आत्मव्यंग्य हैं। व्यंग्यकार दूसरों के दोषों को दिखाकर प्रहार करते हैं वैसे अपने आपकों पूरे यथार्थ के साथ दुनियाँ के सामने प्रस्तुत करते हैं। रामधारीसिंह दिनकर ने आत्मव्यंग्य के संदर्भ में लिखा हैं, —

> " व्यंग्य विनोद की वैदकता और निर्दोषता उस समय और बढ़ जाती हैं जब लेखक व्यंग्य दूसरों पर नही अपने-आप पर करता हैं।" [१]

व्यंग्यकार स्वयं पर व्यंग्य कर दूसरों पर व्यंग्य निर्देश भी करते हैं। इस प्रकार के व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई हैं।

---

१ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", डॉ॰बापूराव देसाई, पृ॰४२।

३) राजनीतिक व्यंग्य —

आज सर्वत्र राजनीति का बोलबाला दिखाई देता है और इसी राजनीति को देश के हीत के लिए कदम उठाने को बाध करना, एकमात्र कानून व्यंग्य ही है। राजनीतिक व्यंग्य की शुरुआत भारतेन्दु लाल से हुई और इस युग के प्रमुख व्यंग्यकार बालकृष्ण भट्ट दिखाई देते है। परतन्त्र में अंग्रेजी शासन के खिलाफ शक्ति से नहीं बल्कि युक्ति से स्वातंत्र्यप्राप्ति करना आवश्यक था। व्यंग्य के माध्यम से साहित्यकारों ने देशवासियों के मन में देशभक्ति निर्माण कर स्वातंत्र्यप्राप्ति में व्यंग्य ही ने सहयोग दिया।

स्वातंत्र्यप्राप्ति के बाद देश की हालत देखकर एक संवेदनशील कलाकार तड़प उठा। राजनीति में अपने आप को प्रभावी और अपना स्थान अपराजेय बनाने के लिए, जनता के सामने प्रभावी ढंग से भाषण देना एकमात्र साधन बन गया। आज के नेता गांधी और गीता के उपदेश लोगों के सामने रखते हैं, और काम हमेशा अपने स्वार्थ का करते हैं। नेताओं का दलबदलुपन, दुमुँहापन, बढ़ती हुई मँहगाई, वोट के लिए जनता को खरिदना, विपक्ष की सरकार को गिराना, आदि को व्यंग्यकारों ने अपने व्यंग्य का विषय बनाया। इन विसंगतियों को व्यंग्यकारों ने अपने प्रभावी शैली से जनता के सामने पेश किया।

राजनीतिक व्यंग्य के संदर्भ में अंग्रेजी व्यंग्यकार जेम्स सदरलैंड ने लिखा है — "राजनैतिक व्यंग्यकार सरलता से अपना उद्देश्य पूरा कर लेता है क्योंकि जनता में राजनैतिक व्यंग्य के प्रति पहले से ही राजनीति की असंगतियों के प्रति आक्रोश के भाव विद्यमान रहते हैं और यदि व्यंग्यकार इन्ही विसंगतियों पर चोट करता है तो तुरंत उसे आशाजनक तथा अनुकूल प्रतिक्रिया जनता से प्राप्त हो जाती है।" [१]

---

१ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", डॉ.बापूराव देसाई, पृ.४४।

४) धार्मिक व्यंग्य —

हिन्दु-मुस्लिम, सिख-इसाई आदि सभी को अपना अपना धर्म पवित्र और प्रिय होता हैं। धर्म के बारे में यह कहा जाता हैं कि जो धर्म किसी दूसरे धर्म का आदर न करे सके, तो उसे कु धर्म कहा जाता हैं। हर एक राष्ट्र अपने धर्म के अनुसार अपने कायदे - कानुन बनाता हैं। जब धर्म के क्षेत्र में विकृतियाँ जन्म लेती हैं तो उन विकृतियों पर नियंत्रन रखना आवश्यक होता हैं। धर्म के क्षेत्र में किये जाने वाले अनैतिक व्यवहार पर किया जानेवाला साहित्यिक प्रहार धार्मिक व्यंग्य कहलाता हैं। साहित्यकारोंने क्रिश्चन धर्मगुरू पोप, चर्च, पादरी, पंडित, पुजारी, मुल्ला आदि की अनैतिकता और पाखण्ड को लेकर व्यंग्य रचनाओं का सृजन किया।

कबीर ने अपने समय के तीर्थ स्थान का भ्रष्टाचार, छुआछूत, पूजा-अर्चा, धार्मिक व्यवहार आदि को लेकर तीखा प्रहार किया। भारतेन्दु युग के साहित्यकारों ने सनातन धर्म में व्याप्त कर्मकाण्ड की विकृतियाँ तथा मंदिरों में होनेवाले भ्रष्टाचार, पापाचार, आदि को समाप्त करने के उद्देश्य से व्यंग्य के कठोर प्रहार किये। भारतेन्दु ने धर्म सम्बन्धी अपने विचार प्रकट किये। बालकृष्ण भट्ट ने भारत में धर्म पर अत्यधिक जोर दिये जाने के कारण ही देश की दूर्दशा हुअी, मुख्य कारण स्विकार किया।

पंडे-पुजारी, धर्मगुरू, मौला सभी धर्म का उपयोग अपने स्वार्थ के लिए कर रहे हैं। धर्म को अफीम की गोली कहते हैं। धर्म की आड़ से आज भी बहुत से लोगों पर अत्याचार हो रहे हैं।

भारत एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र हैं। यहाँ हर एक को अपने धर्म के अनुसार आचरण करने की स्वच्छन्दता हैं। भारत एक बहुधर्मी देश हैं। धर्म के नाम पर लोग देश को बाँट लेने को सोच रहे हैं। आज अपने देश में कोई राम को मानता हैं तो कोई रहिम को, धर्म को लेकर मंदीर-मसजीद प्रश्न की समस्या खड़ी हुई हैं। बड़े बड़े संत, महात्मा, आचार्य, मौला, धर्मगुरू लोगों

को धर्म के नाम पर भड़का रहे हैं। धर्म की नीव खोखली बना रहे हैं। ऐसे कई प्रश्न आज देश में धर्म के नाम पर निर्माण हैं, जो देश की समस्या बन खड़े हैं। इन स्थितियों को साहित्यकारों ने अपनी लेखनी के माध्यम से समाज के सामने प्रस्तुत किया हैं।

५) सामाजिक व्यंग्य --

समाज, मानव के विकास का केन्द्रबिन्दु हैं! मानव इसी समाज में जन्म लेकर समाज से ही विकास की गति ग्रहण करता हैं। समाज मनुष्यों की आवश्यकता की पूर्ती करता हैं किन्तु अनेक बार राजनीतिक, आर्थिक तथा अन्य कारणों से समाज में असंतुलन पैदा होता हैं।

भारतेन्दु युग में भारतीय समाज की स्थिति शोचनीय थी। समाज में अनेक समस्याएं तथा कुरीतियाँ व्याप्त थी। इस युग के साहित्यकारों ने व्यंग्य रचनाओं का सृजन कर समाज सुधार का नारा लगाया। द्विवेदी युग के साहित्यकारों ने निम्न-से-निम्न श्रेणी के लोगों तक समाज सुधार की भावना को पहूँचा दिया।

आज भारतीय समाज में कई समस्याएँ नजर आ रही हैं। देश में बेकारी की समस्या अपना मुँह फैलाये खड़ी हैं। पूँजिपति, उद्योगपति देश के मजदुर, किसान, वर्ग का शोषण कर रहे हैं। फलतः गरीब गरीब होता जा रहा हैं और अमीर अमीर बनता जा रहा हैं। मिलावट खोरी, जमाखोरी, कालाबाजारी आदि समस्याओं ने समाज को खोखला बना दिया हैं। समाज में व्याप्त मदिरापान, वेश्यावृत्ति, झूठ बोलना, आपस में मतभेद, आदि समस्याओं को व्यंग्यकारों ने अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया हैं। समाज में बनी-बनाई हर एक वस्तु नकली हैं, बाहर लेबल एक होता हैं और अंदर वस्तु कुछ और। समाज में कुछ लोग जाली नोटों को बनाने मे तत्पर हैं। आज समाज

में हर एक मानव अपने चेहरे पर नकाब पहन कर घुमता हैं। किसी का चेहरा साफ नजर नही आ रहा हैं, हर एक की कथनी और करनी में फर्क हैं। इसी तरह समाज में स्थित कुरीतियों, असंगति, अन्याय आदि पर साहित्यकारों ने अपने व्यंग्य से प्रहार कर समाज सुधार का नारा लगाया हैं।

६) साहित्यिक व्यंग्य --

साहित्य, समाज का दर्पन होता हैं, साहित्यकार व्यक्ति, समाज, राष्ट्र के दोषों को दिखाकर उन्हे प्रगति के मार्ग पर आरूढ करता हैं। व्यक्ति का संबंध, व्यक्ति और समाज का संबंध, समाज और राष्ट्र का निकट का नाता साहित्यकार पर निर्भर करता हैं। इसी कारण साहित्यकार का स्थान हर एक राष्ट्र में महत्वपूर्ण होता हैं। इसी साहित्यिकों के क्षेत्र में भी अंतर्विरोध, भ्रष्टाचार पनप रहा हैं। हर एक लेखक अपनी ही प्रसिध्दि चाहता हैं, हर एक को नाम, शोहरत, पैसा, प्रिय लग रहा हैं, इसी कारण वे भ्रष्ट प्रवृत्तियों के शिकार बनते जा रहे हैं। साहित्यकारों के भ्रष्ट प्रवृत्तियों के बारे में जानकारी देते हुए डॉ• बापूराव देसाई कहते हैं --

"किसी दूसरे साहित्यकार की नकल करना, ताना मारना, उसकी कृति पर आलोचना कर उसके दोष ढूंढना आदि विषय इसमें आते हैं। किसी प्रतित यश साहित्य के मार्ग में रोड़े अटकाना, उसे पीछे खींचना, येनकेन प्रकारेना ही अपना ही निबंध छपवाना, इससे भी बढ़कर प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक या विश्वविद्यालयीन पाठ्यक्रम में अपना निबंध, पाठ डालना, सरकारी अर्ध सरकारी समिति में अपना नाम डालना, धन-राशि पुरस्कार, प्राप्त करना, सरकारी खर्च पर विदेश भ्रमण करना आदि कई प्रवृत्तियों से व्यंग्यात्मक निबंधसाहित्य में पाये जाते हैं। साहित्य भी एक राजमैदान हैं, जिसमें सभी प्रकार के दाँव दूसरे साहित्य पर उसे पराजित करने के लिए उपयोग में लाये जाते हैं।" [१]

---

१ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध एवं निबंधकार", डॉ•बापूराव देसाई, १९८७, पृ•४६-४७।

७) शैक्षणिक व्यंग्य —

व्यक्ति और समाज को सामंजस, सुसंस्कृत, शिक्षित बनाने के लिए शिक्षा मूलाधार होती हैं। वही समाज अधिक से अधिक प्रगति कर सकता हैं जिसमें शिक्षा का प्रसार हुआ हो, शिक्षा का प्रसार होने से उस देश के नागरिक आदर्श, सुंस्कृत बन सकते हैं लेकिन आज शिक्षा के क्षेत्र में राजनीति के समान बेईमानी, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, खुलेआम चल रही हैं। आज पाठशाला में बच्चों को भरती करवाना हैं तो डोनेशन देना पड़ता हैं, और उच्च शिक्षा और तंत्र विद्या के तो दाम कुछ और हैं। इसका यही कारण हैं कि शिक्षा संस्थान सरकारी न होकर निजी संस्थान हैं। शिक्षा संस्थान आज एक व्यवसाय बन गया हैं। अँगुठा उठानेवाले, चारित्र्यहीन, भ्रष्ट प्रवृत्ति के लोगों के हाथ में सरकार ने शिक्षा संस्थान सौंप देने के कारण, वह समाज के पतन का मुख्य कारण बन गई हैं।

अध्यापकों की नियुक्ति के लिए संस्था मालिक को घूस देना, अध्यापकों को अधुरी तनख्वाह, जिसके कारण वह अध्यापक भी कर्तव्यच्युत बन गये हैं। बेकारी की समस्या के कारण छात्रों का पढ़ने में मन नहीं लगता। नंबर बढ़वाने, कॉपी करना, चर्चा आउट करवाना, अपने प्रश्नपत्र के लिए किसी दूसरे लड़के को बिठाना, परिक्षा कक्ष में अध्यापक या पर्यवेक्षकों को धमकी देना ऐसे गलत राह पर छात्र चल रहे हैं। फलत: अध्ययन करके अच्छे अंक कमानेवाले छात्र को समाज में इज्जत नहीं मिल रही हैं। शिक्षा लेना अब आम आदमी का काम नहीं रहा। देश की जनता आज की शिक्षा पध्दति से नाराज हैं।

शिक्षा क्षेत्र में चलनेवाली बेईमानी, भ्रष्टाचार, इसका और एक कारण हैं कि अपने देश में जितने भी बुध्दिवादी ऊँचे ऊँचे पद पर काम कर रहे हैं, वे सब निजी शिक्षा संस्थान मालिकों के हाथ की कटपुतलियाँ बने हुओ हैं। इस तरह शिक्षा के क्षेत्र में चल रही बुराईयों को युगीन व्यंग्यकारों ने अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया हैं।

८) प्रशासनिक व्यंग्य --

किसी भी राष्ट्र का विकास उसकी शासन व्यवस्था पर निर्भर करता है। इसी कारण देश की शासन व्यवस्था कुशल, कर्तव्यदक्ष, निःस्वार्थी, निःपक्षपाती होनी चाहिए, उसे आलोचक की तरह तटस्थ रहकर शासन का कारोबार करना चाहिए लेकिन राजनीति के बढ़ते हुए दबावतंत्र के कारण शासकीय कार्यालयों में भ्रष्टाचार, अनैतिकता, आलस्य, विलंब, जनता का शोषण आदि कई बुराईयाँ उसमें व्याप्त है। आज लोग यह महसूस कर रहे है कि जिसकी पार्टी आज सत्ता पर है, उसी पार्टी के नोकर काम पर देर से पहुँच जाते है, इससे वे पार्टी पर होनेवाला अपना अधिकार सिध्द करते है। कोई बड़ा अधिकारी उनके खिलाफ कार्यवाही नही कर सकता क्योंकि वह जानता है कि अगर कार्यवाही करे तो उसे अपने नौकरी से हाथ धोने पड़ेंगे। यह सब प्रशासनिक व्यवस्था में जो भ्रष्टाचार, अनैतिकता, आलस्य, विलंब चल रहा है उसका एक मात्र कारण राजनीति है।

अपने देश के नेता के कारण आज योग्यताहीन लोग प्रशासन में बडे बडे पदों पर काम कर रहे है। पुलिस किसी नेता के बहकावे में आकर निर्दोष व्यक्तियों पर मनमानी अत्याचार करती है। आम आदमी न्याय की आशा नही कर सकता। भ्रष्टाचार आज सरकारके हर एक विभाग में चल रहा है। भ्रष्टाचार को आज लोगों ने शिष्टाचार में बदल लिया है। बडे बडे अधिकारी शासन की गाडी से अपनो निजी काम करवाते है, अपने बच्चों को स्कूल भेजते है यहाँ तक की बाजार से मिर्च-मसाला लाने के लिए दफ्तर की गाडी का इस्तेमाल किया जाता है। युगीन साहित्यकार इस प्रकार शासन व्यवस्था में चल रही बुराईयों का पर्दाफाश करके व्यंग्यात्मक रचनाओं का सृजन कर रहे है।

१) सांस्कृतिक व्यंग्य --

संस्कृति एक ऐसा तत्व है, जिसके सहारे देश के हर एक व्यक्ति पर जीवन के संस्कार किये जाते हैं। विश्व की अन्य देशों की तुलना में भारतीय संस्कृति प्राचिनतम् संस्कृति है। भारतीय संस्कृति में विराट समन्वय की भावना विद्यमान है। देश में भिन्न भिन्न जातियों, धर्मों, वर्णों, पंथ, सम्प्रदायों को वह परस्पर एकता और प्रेम के बन्धन में बांध सकने में समर्थ है लेकिन परतंत्र्य के कारण भारतीय जन-जीवन पर पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव तेजी से पड़ रहा था। पाश्चात्य साहित्य के अध्ययन से देश की युवा पीढ़ी पाश्चात्यों का अनुकरण कर रही है। आज भारत की युवा पीढ़ी देश के प्राचीन मुल्यों को भूल रही है।

स्वातंत्र्यप्राप्ति के पश्चात हमने मॉडर्न युग में प्रवेश किया और हमारे देश युवकों ने खान-पान, वेश-भूषा, रहन-सहन सभी बातों में पूरी तरह बदल किया। आज देश में किसी भी व्यक्ति के पास चारित्र्य सम्पन्नता का अभाव है। देश की युवतीयों को चारित्र्य संपन्न और शीलवान बनना चाहिए लेकिन देश की युवतियाँ शादी से पहले एक-दो बार गर्भ-पात करती हैं। युवा वर्ग रात के अंधेरे में चुपचाप बी.पी. विडीओ कॅसेट देखकर वही अनुकरण करने लगी है। होटल - बार में स्त्रीयों नंगा नचाया जाता है और उसका भोग भी किया जाता है। पुरूषों की तरह स्त्रिया भी सिगरेट और शराब का सेवन करती हैं। युवा पीढ़ी प्राचिन जीवन मुल्यों को भूल रही है। पुरानी पीढ़ी के साथ संघर्ष कर रही है। इस तरह के नैतिक पतन के लि लिए सिर्फ युवा पीढ़ी को दोष देना उचित नहीं, इसके लिए हम अपने पहलेवाली पीढ़ी को दोष दे सकते हैं क्योंकि उनका काम था की वे स्वयं अच्छे संस्कार ग्रहण करे और भावी पीढ़ी पर भी अच्छे संस्कार करे तभी हमारी संस्कृति की महानता चीरकाल टिक पायेगी।

इस तरह संवेदनशील साहित्यकारों ने सांस्कृतिक क्षेत्र में कितनी भी विसंगतियाँ दिखाई दी उन पर उन्होने व्यंग्य के माध्यम से प्रहार किये हैं।

१०) आर्थिक व्यंग्य --

स्वतंत्रता - प्राप्ति के पश्चात देश का आर्थिक विकास तथा देश को आत्मनिर्भर बनाने के उद्देश्य से देश में पंचवर्षीय योजनाएँ लागु की। पहले एक-दो योजनाओं से देश की स्थिति में कुछ सुधार हुआ लेकिन पंडित जवाहरलाला तथा शास्त्री की मृत्यु के पश्चात व्यक्तिगत स्वार्थ-पूर्ति की भावना देश के नेता, अफसर, लोगों में जन्मी, जिसने व्यापक पैमाने पर भ्रष्टाचार को जनम दिया। अदुरदर्शिता, अकुशलता, फिजूलखर्ची, रिश्वतखोरी, कामचोरी जैसी प्रवृत्ति ने लोगों के मन में घर कर लिया। लोग व्यक्तिगत स्वार्थ-पूर्ति के आगे देश हित को भूल गये। जमाखोरी और मुनाफाखोरी के कारण मँहगाई बढ़ती गई और आम आदमी के लिए दो वक्त की रोटी मिलना मुश्किल हुआ। आर्थिक सुधार के लिए जो योजनाएँ लागु की जाती उसका आधे से ज्यादा भाग नेताओं, अफसरों, तथा दलालों के हाथ लगा। फलत: अमीर अमीर और गरीब गरीब रहे। एक तरफ उँची इमारते, शानो-शौकत की एय्याशी जींदगी तो दुसरी ओर सड़कों और गंदे नालों के किनारे भूख-प्यास से पीडित लोग अपना जीवन जी रहे हैं। आज देश विदेशी ऋण के बोझ से दब गया है और उद्योगपति, नेता जैसे कितने ही लोग अपना पैसा विदेशी बैंकों में जमा कर रहे हैं।

देश के साहित्यकारों ने देश की गिरती हुई आर्थिक स्थिती, वैषम्य, रिश्वतखोरी, बेकारी, मँहगाई, कालाबाजारी, नेता, पूँजीपति, जमाखोरी और मुनाफाखोरी आदि को लेकर अनेक व्यंग्य रचनाओं का सृजन किया गया।

इस तरह व्यंग्य के विविध प्रकार हो सकते हैं ;

निष्कर्ष —

युगीन किसी घटना, वस्तु या प्रसंग के तथ्यपूर्ण आधार पर की गई वक्रोक्तिपूर्ण अभिव्यक्ति व्यंग्य है। वस्तुत: व्यंग्य रचना वह विधा है, जिसमें तथ्य को सिधा न कहकर उसे घेरा घुमा फिराकर कहा जाता है। निश्चय ही व्यंग्य लेखक लोक – जीवन को तथ्यों से अवगत कराकर उसे सतर्क रखता है। व्यंग्य विधा का मुख्य उद्देश्य पाठक या श्रोता जीवन की विसंगतियों को मार्मिक स्तर पर भोगे, समझे और तथ्य के दंश को अनुभव करे। व्यंग्य व्यक्ति और समाज के लिए क्रांतिकारी विचार, और नवजागरण का संदेश भी देता रहता है। भारतीय समाज में क्रांतिकारी बदलाव लाने के लिए व्यंग्य का हथियार कारगर सिध्द हुआ है। व्यंग्य में जो चुभन होती है वह आलम्बन के समग्र अस्तित्व को झनझना देती है। स्वातंत्र्य प्राप्ति के व्यंग्य लेखन ने न केवल जीवन के दाँव-पेच परखने की नयी नजर दी, वरन् वस्तुस्थिति की प्रखर अनुभूति के द्वारा जिन्दगी को एक नयी राह भी दिखायी है। आज हिन्दी साहित्य में व्यंग्य एक आधुनिक, सशक्त, स्वायत्तपूर्ण विधा है।

स्वातंत्र्योत्तर काल के समाज में मनुष्य के जीवन की मान्यताएं ही बदलने लगी हैं, शाश्वत नीति – मूल्यों की अवहेलना होने लगी है। अपराधी लोगों को सचेत करने के लिए, उनमें सुधार के लिए व्यंग्यकार उनकी पोल खोल देता है, तब व्यंग्य का सृजन होता है। सत्य की अभिव्यक्ति करना व्यंग्य का उध्दिष्ट होता है और उसके लिए व्यंग्यकार को अपने समय से संबंधित रहते हुए दर्शक, भोक्ता और आलोचक बनना पड़ता है और अपने समाज के नग्न यथार्थ को स्पष्ट रूप से चित्रित करना पड़ता है। इसलिये व्यंग्यकार को जीवन से बिकट साक्षात्कार करना पड़ता है।

व्यंग्य एक सच्चा, ईमानदार, संवेदनशील तथा उद्देश्यपूर्ण कार्य है। व्यंग्य निराशा तथा निरुत्साही समाज जीवन में आशा का संदेश लाता है, उसमें स्फूर्ति जगाता है और उसे संघर्ष के लिए तैयार करता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद व्यंग्य साहित्य अधिक मात्रा में लिखा गया क्योंकि नयी पीढ़ी में आक्रोश है, घुटन है, कुंठा है तथा वह समाज में फैली हुई विषमताओं की प्रतिक्रिया व्यक्त करती है। व्यंग्य सभ्यता का चोला पहननेवाली, रिश्वतखोली, पक्षपाती, सिफारिशी, समय की अपव्ययता आदि कारनामों का पर्दाफाश करके, इन विसंगति पर योजनाबध्द प्रहार करता है। व्यंग्य विधा से जीवन के सभी आयामों पर प्रहार किया जाता है। विशेषतः राजनीति, धार्मिक, आर्थिक, साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा प्रशासनिक आदि। वैसे देखाजाय तो वर्तमान काल में राजनैतिक व्यंग्य अधिक मात्रा में लिखा जा रहा है क्योंकि आजकल राजनीति अधिक मात्रा में विकृत हो गयी है। व्यंग्य एक सामाजिक विधा है, जिसके सहारे समाज में पलनेवाली बिमारियों को दूर करने के लिए व्यंग्यरूपी सस्ती दवा ही बहुत आवश्यक है। व्यंग्य एक भावना है, जो त्वरित होकर समय और कर्तव्य कर्म से प्रेरित रहती है। व्यष्टि से समष्टि तक के सभी मानवीय क्रियाकलापों में जर्जर, नृशंस, अनैतिक, भ्रष्ट, पापी, भयानक व्यवस्था का पर्याय आज व्यंग्य है। आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक पूरी व्यवस्थागत हास्यास्पद विसंगतियों और छद्मों को खोलने उधाड़ने और उनपर भरपूर प्रहार करने के लिहाज से व्यंग्य की विधा काफी कारगर साबित हो सकती है। व्यंग्य ने जीवन के विविध क्षेत्रों में प्रवेश कर अनीतिपूर्ण कार्यों की पोल खोलने का काम दिन-रात ही किया है। ग्रीक, फ्रेंच, अंग्रेजी, रूसी, लैटीन साहित्य में व्यंग्य की समृध्द परंपरा है। हिन्दी में भी व्यंग्य कविताएं, उपन्यास, निबंधों की अपनी समृध्द परंपरा है।

व्यंग्य विधा पश्चिम के प्रभाव से विकसित है। हिन्दी के आदिकाल से लेकर आजतक के विविध काल-खण्डों में व्यंग्य का अस्तित्व मिलता है। प्रगतिशील आंदोलन के समय में उपजे इस माध्यम में सामाजिक यथार्थ को पहचानने, पकड़ने और पूरी धारा के साथ अभिव्यक्ति देने की इतनी क्षमता है कि उसे स्वतंत्र रूप में सामने लाने की जरूरत महसूस हुई और शायद इसीलिये

आज व्यंग्य को स्वतंत्र विधा का दर्जा मिल रहा हैं। स्वातंत्र्योत्तर काल की दुनियां भर की विसंगतियों को व्यंग्य विधा ने अभिव्यक्ति दी हैं। पैतालीस वर्ष की पूरी विकृतियों को व्यंग्यकारों ने देखा, परखा, भोगा और तत्पश्चात प्रकट किया हैं। स्वतंत्रता के बाद के हमारे जीवन मूल्यों के विघटन का इतिहास जब भी लिखा जायेगा तो परसाई का साहित्य संदर्भ का काम करेगा।

स्वातंत्र्योत्तर काल में एक नये पौधे के रूप में व्यंग्य ने प्रवेश पाया और किशोरावस्था से यौवनावस्था तक उसका विकास हुआ। स्वातंत्र्यपूर्व काल की अपेक्षा स्वातंत्र्योत्तर काल में विसंगति के काले बादल अधिक मंडराते हुए दिखाई दिये ऐसे समय व्यंग्य ने समाज का असली प्रतिबिंब साहित्य में उभारने का महत्वपूर्ण काम किया। व्यंग्यकार समाज के कैमरामैन रहे हैं, जिन्होने अपने साहित्य में समाज के नग्न यथार्थ का पर्दाफाश किया हैं। जिन आलचकोंने, विचारकोंने व्यंग्य के गंभीर उद्देश्यपूर्ती को ठुकराया तथा व्यंग्य लेखक को हल्का, सड़क छाप, फनी माना, यही लोग व्यंग्य को साहित्य की "शेड्यूल्ड कास्ट" विधा मानते हैं, इन्ही मर्यादावादी लोगों ने कबीर को भी कवि मानने से इन्कार किया था, पर ये लोग निश्चित रूप से गलत धारणाओं के शिकार बन गये हैं। ये बात असलियत का पता चलने पर सिध्द होती हैं। वास्तविकता को देखते हुए व्यंग्य का महत्व मानना ही पड़ता हैं।

विसंगति का जितना व्यापक विस्तार होगा उतना ही व्यापक विस्तार व्यंग्य कथा का होगा। व्यंग्य कथा के लिए अनेक विषय है - आत्मपरक, व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, धार्मिक, साहित्यिक, शैक्षीक सांस्कृतिक आदि। व्यंग्य की भाषा साहित्य की अन्य विधा से अलग ढंग की हैं। व्यंग्य की भाषा सजीव रोचक, प्रवाहपूर्ण मार्मिक, ध्वन्यात्मक, लालित्यपूर्ण हैं। व्यंग्यकार अपनी अभिव्यक्ति में धारदार भाषा का संयोजन करता हैं। व्यंग्य की भाषा में प्रतिकों की भरमार हैं। व्यंग्यकार अन्योक्ति

के माध्यम से अनेक संकेत देता रहता हैं। मराठी में कहावत है "लेकी बोले सुने लागे" इस प्रकार की भाषा व्यंग्य की हैं। व्यंग्य की भाषा तीक्ष्ण, तीखी और प्रहारात्मक होती हैं, उसमें कहावतों, मुहावरे आदि का समावेश किया जाता हैं। सहज, स्वाभाविक, बोलचाल की भाषा का भी प्रयोग इस में किया जाता हैं। भाषा के सहारे ही व्यंग्यकार अभिव्यक्ति की नई - नई मंजिलों की ओर अग्रेसर होता हैं। व्यंग्यकार आलम्ब पर थोडे ही शब्दों में कोडे की मार देता रहता हैं।

व्यंग्य के माध्यम से विश्व बधुत्व की भावना को बढा दिया जाता हैं, परस्पर सहयोग द्वारा सुधार की दृष्टि प्रदान कर स्वस्थ समाज की स्थापना करना, धर्म, शिक्षा, संस्कृति के पवित्र क्षेत्र में नैतिकता तथा आध्यात्मिकता की भावना जाग्रत करना, राजनीति का समाज प्रबोधन के लिए उपयोग करना, प्रशासन क्षेत्र की रिश्वतखोरी, धांधली को मिटाना आदि कार्य किये जाते हैं।

व्यंग्य की लोकप्रियता के कारण आज व्यंग्य रचनाएं विश्वविद्यालयीन अभ्यास-क्रम में भी समाविष्ट की गई हैं। व्यंग्य की लोकप्रियता बढ़ाने में व्यंग्यकार, समीक्षक, पाठक, आकाशवाणी, दूरदर्शन, पत्र-पत्रिकाएं, रंगमंच, पत्र-पत्रिकाएं आदि का सहयोग बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। सद्यः स्थिति को देखते हुए व्यंग्य की आज बहुत धाक हैं। व्यंग्य का प्रभाव सामाजिक राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, प्रशासनीक, शैक्षिक, आदि सभी क्षेत्रों में पहुँच चुका हैं। विशेषतः आज के जमाने की तेज रफ्तार के साथ दौडने का काम केवल व्यंग्य ही कर सकता हैं। समाज की जटिलता, संकीर्णता का अहसास केवल व्यंग्य को ही होता हैं। व्यंग्य अगर इन विकृतियों पर तीक्ष्ण प्रहार करता रहेगा तो व्यंग्य का भविष्य उज्ज्वल है। इस दृष्टि से व्यंग्य का महत्व अनन्यसाधारण हैं।